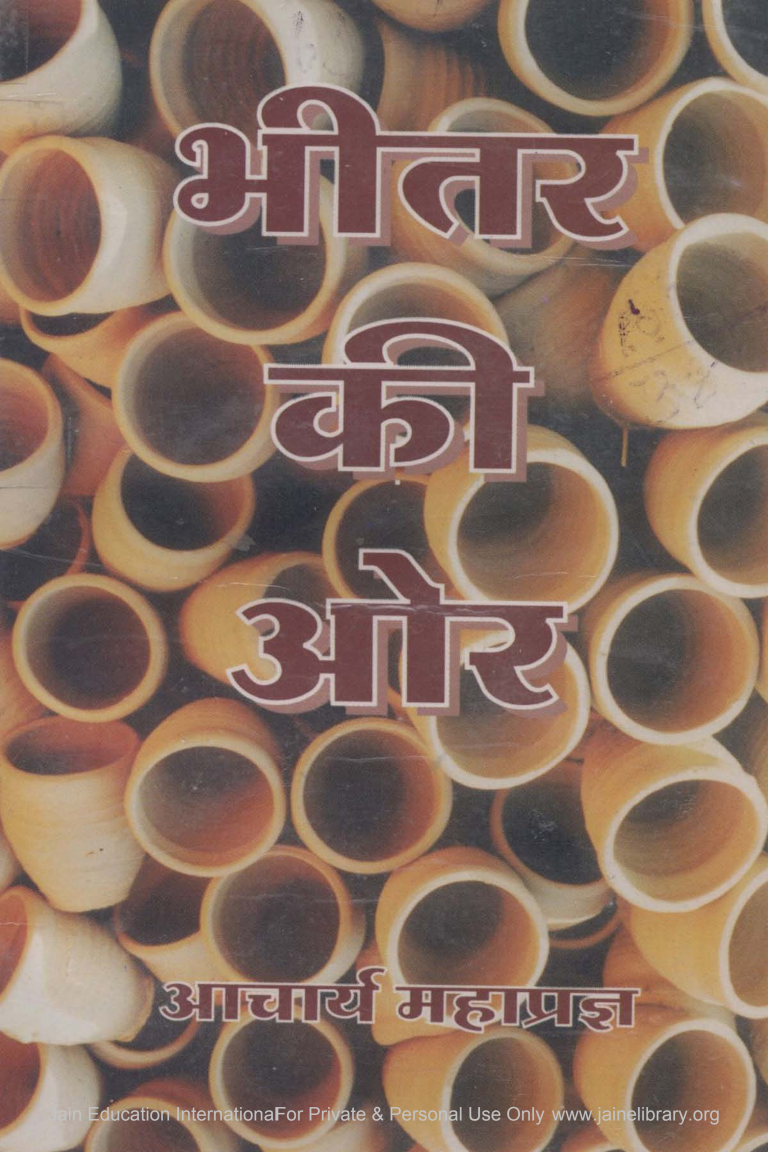

भीतर की ओर

आचार्य महाप्रज्ञ

Jain Education InternationaFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भीतर की ओर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन विश्व भारती प्रकाशन

भीतर की ओर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भीतर की ओर

प्रेक्षा ध्यान के रहस्य

आचार्य महाप्रज्ञ

भीतर की ओर

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती
लाडनूं ३४१३०६ (राज.)

सौजन्य
श्री सूरजमल, विमलकुमार, निर्मलकुमार, सुशीलकुमार,
राजकुमार घोसल (राजलदेसर-नई दिल्ली)

© जैन विश्व भारती

प्रथम संस्करण : २००१

मूल्य : साठ रुपये मात्र

आवरण छाया : निषाद

आकल्पन एवं मुद्रक :
साँखला प्रिण्टर्स, सुगन निवास
चन्दनसागर, बीकानेर ३३४००१

BHITAR KI AUR
by Acharya Mahaprajna
ISBN 81-7195-064-7
Rs. 60.00

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुति

बाहर दरवाजा है और भीतर कमरा है। दरवाजा जाने आने के लिए है, रहने के लिए नहीं। दरवाजा जरूरी है और कमरा भी जरूरी है। हम दरवाजे पर अटक न जाएं। भीतर जाकर सुख से बैठें और आराम करें। इस पुस्तक का सारांश इतना ही है।

प्रस्तुत पुस्तक में भीतर जाने और भीतर रहने की कुछ विधियों का निर्देश है।

प्रेक्षाध्यान के विषय में अनेक ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। पर इसमें कुछ वह है, जो शेष सब ग्रंथों में नहीं है इसलिए यह पुस्तक प्रेक्षाध्यान का अभ्यास करने वाले और कराने वाले दोनों के लिए प्रकाश, पथ और पथदर्शन का काम करेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन दिनों मैं प्रेक्षाध्यान के शिविर का संचालन करता था, उन दिनों में अनेक नए नए प्रयोग कराए थे। प्रेक्षाध्यान : सिद्धांत और प्रयोग पुस्तक में वे प्रयोग उल्लिखित नहीं हैं। उन प्रयोगों में से चुने हुए कुछ प्रयोग भी प्रस्तुत पुस्तक में दिए गए हैं। नया भी बहुत कुछ है।

इस पुस्तक के लेखन कार्य में साध्वी विश्रुत विभा ने बहुत श्रम किया है। प्रतिलिपि समणी मुदितप्रज्ञा ने की है। मुनि धनंजयकुमार ने इसका नियोजन किया है।

--आचार्य महाप्रज्ञ

२१ जनवरी, २००१
गंगाशहर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रम

शताब्दी अध्यात्म की	१७	ध्यान का क्षेत्र	३७
नवीनता की सार्थकता	१८	ध्यान की दिशा	३८
नया प्रस्थान	१९	ध्यान की तीन शक्तिया	३९
जीवन के प्रश्न	२०	ध्यान-वस्तु-(१)	४०
सार्थकता का प्रश्न	२१	ध्यान-वस्तु-(२)	४१
जीवन के स्तर-(१)	२२	ध्यान के साधन	४२
जीवन के स्तर-(२)	२३	ध्यान और कल्पना	४३
जीवन के स्तर-(३)	२४	ध्यान के परिणाम-(१)	४४
सूक्ष्म जगत के नियम	२५	ध्यान के परिणाम-(२)	४५
स्थूल से सूक्ष्म की		ध्यानसाधक की कसौटिया	४६
ओर-(१)	२६	सूक्ष्म ध्यान-(१)	४७
स्थूल से सूक्ष्म की		सूक्ष्म ध्यान-(२)	४८
ओर-(२)	२७	उपसंपदा	४९
स्थूल की समस्या	२८	भावक्रिया-(१)	५०
प्रेक्षाध्यान-(१)	२९	भावक्रिया-(२)	५१
प्रेक्षाध्यान-(२)	३०	भावक्रिया-(३)	५२
प्रेक्षाध्यान का ध्येय	३१	भावक्रिया-(४)	५३
प्रेक्षाध्यान की तीन		भावक्रिया-(५)	५४
भूमिकाएं-(१)	३२	प्रतिक्रिया विरति	५५
प्रेक्षाध्यान की कसौटियां	३३	मैत्री	५६
प्रेक्षा और कर्म सिद्धान्त	३४	मिताहार	५७
ध्यान का उद्देश्य	३५	मितभाषण	५८
ध्यान की अवस्थाएं	३६	मौन	५९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हम्–(१)	६०	आत्मनिरीक्षण	८५
अर्हम्–(२)	६१	आत्मदर्शन	८६
अर्हम्–(३)	६२	आत्म-शोधन	८७
अर्हम्–(४)	६३	श्वास कैसे लें ?	८८
महाप्राण ध्वनि–(१)	६४	श्वास के तीन रूप	८९
महाप्राण ध्वनि–(२)	६५	श्वास दर्शन की भूमिकाएं	९०
चतुरङ्ग कायोत्सर्ग	६६	श्वास का आलम्बन	९१
कायोत्सर्ग की पांच भूमिकाएं	६७	दीर्घश्वास	९२
कायोत्सर्ग–(१)	६८	श्वास और एकाग्रता	९३
कायोत्सर्ग–(२)	६९	लयबद्ध श्वास	९४
कायोत्सर्ग–(३)	७०	श्वास : स्पर्श का अनुभव	९५
कायोत्सर्ग–(४)	७१	श्वास और श्वासप्राण	९६
कायोत्सर्ग–(५)	७२	श्वास और हृदय	९७
कायोत्सर्ग–(६)	७३	समवृतिश्वास	९८
कायोत्सर्ग–(७)	७४	शरीर के रहस्य	९९
कंठ का कायोत्सर्ग	७५	शरीर प्रशिक्षण प्रविधि	१००
तनाव–(१)	७६	विकास की पहली भूमिका	१०१
तनाव–(२)	७७	चैतन्यकेन्द्र–(१)	१०२
तनाव–(३)	७८	चैतन्यकेन्द्र–(२)	१०३
तनाव और कायोत्सर्ग	७९	चैतन्यकेन्द्र : अवस्थिति	१०४
अन्तर्यात्रा	८०	शक्तिकेन्द्र–(१)	१०५
सुषुम्ना–(१)	८१	शक्तिकेन्द्र–(२)	१०६
सुषुम्ना–(२)	८२	शक्तिकेन्द्र–(३)	१०७
अन्तर्मुखता के नियम–(१)	८३	शक्ति केन्द्र के जागरण	
अन्तर्मुखता के नियम–(२)	८४	की प्रक्रिया–(१)	१०८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति केन्द्र के जागरण की प्रक्रिया–(२)	१०९
शक्ति केन्द्र के जागरण की प्रक्रिया–(३)	११०
स्वास्थ्य केन्द्र	१११
तैजस केन्द्र	११२
आनन्द केन्द्र	११३
विशुद्धि केन्द्र	११४
ब्रह्म केन्द्र	११५
प्राण केन्द्र–(१)	११६
प्राण केन्द्र–(२)	११७
प्राण केन्द्र–(३)	११८
अप्रमाद केन्द्र	११९
चाक्षुष केन्द्र	१२०
दर्शन केन्द्र–(१)	१२१
दर्शन केन्द्र–(२)	१२२
ज्योति केन्द्र	१२३
शान्ति केन्द्र	१२४
ज्ञानकेन्द्र	१२५
चैतन्य केन्द्र और रंग	१२६
शरीर का सौरमंडल	१२७
चैतन्य केन्द्र और ग्रन्थितंत्र–(१)	१२८
चैतन्य केन्द्र और ग्रन्थितंत्र–(२)	१२९
सप्तधातु और चैतन्य केन्द्र	१३०
ग्रन्थियों के स्राव का संतुलन	१३१
हॉर्मोन्स का संतुलन	१३२
सौरमण्डल और ग्रन्थितंत्र	१३३
रासायनिक नियन्त्रण प्रणाली	१३४
नियन्त्रण स्वतः चालित क्रिया पर	१३५
लेश्या	१३६
लेश्या ध्यान–(१)	१३७
लेश्या ध्यान–(२)	१३८
लेश्या ध्यान–(३)	१३९
लेश्या ध्यान–(४)	१४०
लेश्या ध्यान–(५)	१४१
लेश्या ध्यान–(६)	१४२
अवयव, श्वास और रंग	१४३
रंग पूर्ति की प्रक्रिया	१४४
आभामंडल–(१)	१४५
आभामंडल–(२)	१४६
भाव	१४७
भाव द्वारा परिवर्तन	१४८
वृत्ति परिवर्तन	१४९
वृत्ति का रूपान्तरण	१५०
परिवर्तन की प्रक्रिया–(१)	१५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जल तत्त्व	१९९
अग्नि तत्त्व	२००
वायु तत्त्व	२०१
आकाश तत्त्व	२०२
तत्त्व और हमारा शरीर	२०३
तत्त्व और वर्ण	२०४
तत्त्व और बीज मन्त्र	२०५
नाडी और तत्त्व	२०६
आदत परिवर्तन का सूत्र	२०७
पहले शरीर फिर मन	२०८
मन की प्रकृति	२०९
मन की शक्ति	२१०
मानसिक शक्ति का विकास	२११
जाना होगा मन से परे	२१२
अमन की साधना-(१)	२१३
अमन की साधना-(२)	२१४
मनोरोग का हेतु	२१५
मस्तिष्क-(१)	२१६
मस्तिष्क-(२)	२१७
मस्तिष्क पौद्गलिक है	२१८
कैसे हो मस्तिष्क प्रभावित?	२१९
मस्तिष्कीय क्षमता	२२०
मस्तिष्कीय रसायन-(१)	२२१
मस्तिष्कीय रसायन-(२)	२२२
मस्तिष्क और चन्द्रमा	२२३
चित्त-(१)	२२४
चित्त-(२)	२२५
चित्त-(३)	२२६
चित्तवृत्ति-(१)	२२७
चित्तवृत्ति-(२)	२२८
चेतना के स्तर-(१)	२२९
चेतना के स्तर-(२)	२३०
चेतना का परिवर्तन	२३१
अमृत स्राव और रसायन-(१)	२३२
अमृत स्राव और रसायन-(२)	२३३
जैविक घड़ी-(१)	२३४
जैविक घड़ी-(२)	२३५
ब्रह्मचर्य-(१)	२३६
ब्रह्मचर्य-(२)	२३७
काम वासना पर नियन्त्रण-(१)	२३८
काम वासना पर नियन्त्रण-(२)	२३९
काम वासना पर नियन्त्रण-(३)	२४०
वीर्य को प्रभावित करने वाले आंतरिक कारण	२४१
इन्द्रिय-विजय-(१)	२४२

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन की प्रक्रिया–(२)	१५२	मन्त्रसिद्धि की पहचान	१७५
प्रतिपक्ष भावना–(१)	१५३	कहां होता है मंत्र	
प्रतिपक्ष भावना–(२)	१५४	का उत्थान?	१७६
भाव-विशुद्धि और गंध	१५५	मन्त्र की सिद्धि	१७७
प्रशस्त रंग	१५६	मन्त्रोच्चारण की विधि–(१)	१७८
कृष्णवर्ण प्रधान आभामंडल	१५७	मन्त्रोच्चारण की विधि–(२)	१७९
नीलवर्ण प्रधान आभामंडल	१५८	मन्त्र साधना के तीन सोपान	१८०
कापोतवर्ण प्रधान		अजपाजप	१८१
आभामंडल	१५९	सुरक्षा कवच	१८२
अरुणवर्ण प्रधान		कवच रचना	१८३
आभामंडल	१६०	उच्चारण का मूल्य–(१)	१८४
पीतवर्ण प्रधान आभामंडल	१६१	उच्चारण का मूल्य–(२)	१८५
श्वेतवर्ण प्रधान आभामंडल	१६२	उच्चारण के स्थान	१८६
विचार प्रेक्षा–(१)	१६३	अर्थ के साथ तादात्म्य	१८७
विचार के नियम	१६४	मातृका	१८८
संभेद प्रणिधान–(१)	१६५	एकाग्रता–(१)	१८९
संभेद प्रणिधान–(२)	१६६	एकाग्रता–(२)	१९०
अभेद प्रणिधान	१६७	एकाग्रता–(३)	१९१
रसधातु प्रेक्षा	१६८	सघन एकाग्रता	१९२
रक्तधातु प्रेक्षा	१६९	एकाग्रता के स्तर	१९३
मांसधातु प्रेक्षा	१७०	एकाग्रता की भूमिकाएं	१९४
मेदधातु प्रेक्षा	१७१	एकाग्रता की अवस्थाएं	१९५
अस्थिधातु प्रेक्षा	१७२	एकाग्रता के दो रूप	१९६
मज्जाधातु प्रेक्षा	१७३	एकाग्रता का परिणाम	१९७
शुक्रधातु प्रेक्षा	१७४	पृथ्वी तत्त्व	१९८

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रिय-विजय-(२)	२४३	मौलिक समस्याए	२६७
आयुर्वेद और स्वास्थ्य-(१)	२४४	ऋतुचक्र	२६८
आयुर्वेद और स्वास्थ्य-(२)	२४५	परिष्कार भीतर का	२६९
मानसिक स्वास्थ्य-(१)	२४६	अदृश्य दृश्य बनता है	२७०
मानसिक स्वास्थ्य-(२)	२४७	साधना के आलम्बन	२७१
मानसिक स्वास्थ्य-(३)	२४८	शुद्धि और निरोध	२७२
स्वास्थ्य और आहार-(१)	२४९	आकर्षण : ध्येय के प्रति	२७३
स्वास्थ्य और आहार-(२)	२५०	ज्ञान और ध्यान	२७४
क्या है अकेलापन?	२५१	शक्ति कहां है?	२७५
मनुष्य अकेला कैसे?	२५२	शक्ति के नियम	२७६
सरल नहीं है अकेला रहना	२५३	समाधि के नियम	२७७
अकेला रहने की कला	२५४	समाधि की यात्रा	२७८
भाग्य और पवित्रता	२५५	उपाधि की चिकित्सा	२७९
कैसे होता है भाग्य का परिवर्तन?	२५६	अक्रिया का मूल्य	२८०
जागृत अवस्था	२५७	केवल सुनो	२८१
प्रमाद और अप्रमाद	२५८	विश्वास है या नहीं?	२८२
इच्छाशक्ति	२५९	संचालक कौन?	२८३
सापेक्ष समाधान	२६०	अनुत्सुकता	२८४
पहला पृष्ठ	२६१	प्रेक्षाध्यान की तीन भूमिकाए	२८५
तुम क्या चाहते हो?	२६२	अनुशासन की भूमिका के फलित	२८६
पीड़ा और संवेदना	२६३	संयम	२८७
अवसाद का उपचार	२६४	संयम की भूमिका के फलित	२८८
द्वार बंद न हो	२६५	संवर	२८९
अतीन्द्रिय चेतना	२६६		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवर की भूमिका के फलित	२९०	अमन की साधना–(१)	३१४
सुरक्षा कवच–(१)	२९१	अमन की साधना–(२)	३१५
सुरक्षा कवच–(२)	२९२	अमन की साधना–(३)	३१६
अन्तर्यात्रा	२९३	सुप्त मन को जागृत करना–(१)	३१७
सुषुम्ना जागरण	२९४	सुप्त मन को जागृत करना–(२)	३१८
श्वास-संयम–(१)	२९५	प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)–(१)	३१९
श्वास-संयम–(२)	२९६	प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)–(२)	३२०
लयबद्ध दीर्घश्वास	२९७	प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)–(३)	३२१
दीर्घश्वास	२९८	एकाग्रता–(१)	३२२
दीर्घश्वास–(१)	२९९	एकाग्रता–(२)	३२३
दीर्घश्वास–(२)	३००	मंत्र जप	३२४
रंगीन श्वास	३०१	मंत्र जप : दिव्य अनुभूति	३२५
शरीरप्रेक्षा	३०२	तन्मूर्ति ध्यान	३२६
शरीर-पुष्टि	३०३	इष्टसिद्धि–(१)	३२७
चैतन्यकेन्द्र : 'अर्हं' का न्यास	३०४	इष्टसिद्धि–(२)	३२८
चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा–(१)	३०५	इष्टसिद्धि–(३)	३२९
चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा–(२)	३०६	संकल्प पुष्टि	३३०
संवेग संतुलन की प्रक्रिया	३०७	संकल्पशक्ति का विकास–(१)	३३१
विचार प्रेक्षा	३०८	संकल्पशक्ति का विकास–(२)	३३२
विचार शमन का प्रयोग–(१)	३०९	संकल्प शक्ति का प्रशिक्षण	३३३
विचार शमन का प्रयोग–(२)	३१०		
विचार शमन का प्रयोग–(३)	३११		
विचार शमन का प्रयोग–(४)	३१२		
निर्विचार ध्यान	३१३		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्छा शक्ति का विकास	३३४	मातृका-न्यास-(३)	३५९
ब्रह्मचर्य-(१)	३३५	प्राणशक्ति	३६०
ब्रह्मचर्य-(२)	३३६	तैजस शक्ति	३६१
ब्रह्मचर्य-(३)	३३७	तैजस चक्र	३६२
ब्रह्मचर्य-(४)	३३८	नाड़ी शोधन	३६३
ब्रह्मचर्य-(५)	३३९	कोशिका परिवर्तन	३६४
इन्द्रिय-विजय-(१)	३४०	विद्युत प्रवाह मस्तिष्क मे	३६५
इन्द्रिय-विजय-(२)	३४१	गुण संक्रमण	३६६
संयम	३४२	शील पुरुष : पंचाङ्ग ध्यान	३६७
क्रोध नियन्त्रण-(१)	३४३	वातानुकूलन का अनुभव	३६८
क्रोध नियन्त्रण-(२)	३४४	नियन्त्रण शक्ति	३६९
अभय का विकास	३४५	वर्षीतप	३७०
अहिंसा आदि का अभ्यास	३४६	व्यसन मुक्ति	३७१
अम्रतस्राव और रसायन	३४७	नई आदत का निर्माण	३७२
अमृत प्लावन	३४८	आदत परिवर्तन	३७३
व्याधि चिकित्सा-(१)	३४९	दूसरे की आदत बदलना	३७४
व्याधि चिकित्सा-(२)	३५०	परिवर्तन	३७५
स्वास्थ्य	३५१	वृत्ति परिवर्तन	३७६
पीड़ा-शमन-(१)	३५२	स्मृति-विकास	३७७
पीड़ा-शमन-(२)	३५३	ध्वनि चिकित्सा	३७८
निद्रा	३५४	स्वर चक्र	३७९
सम्यक् निद्रा	३५५	मैत्री	३८०
अनिद्रा	३५६	जागृति	३८१
मातृका-न्यास-(१)	३५७	अज्ञात को ज्ञात करना	३८२
मातृका-न्यास-(२)	३५८	परिशिष्ट	३८३

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भीतर की ओर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शताब्दी अध्यात्म की

इक्कीसवीं शताब्दी अध्यात्म की शताब्दी होगी—यह स्वर यत्र तत्र सुनाई दे रहा है।

आर्थिक विकास, पदार्थ विकास और यान्त्रिक विकास की दौड़ में अध्यात्म की गति कितनी होगी? कैसे होगी? इस प्रश्न का उत्तर देना सहज सरल नहीं है।

विश्व-मानव इन्द्रिय चेतना के स्तर पर जी रहा है। उसका आकर्षण अर्थ, पदार्थ और यन्त्र के प्रति अधिक है।

इन्द्रियातीत चेतना के जागरण के बिना अध्यात्म के प्रति आकर्षण कैसे होगा?

०१ जनवरी
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवीनता की सार्थकता

नई सदी का प्रवेश नए संकल्पों के साथ हो, तभी इस 'नया' शब्द की सार्थकता हो सकती है।

१. मैं संयमप्रधान जीवनशैली का विकास करूंगा।

२. मैं समताप्रधान जीवनशैली का विकास करूंगा।

३. मैं सदाचारप्रधान जीवनशैली का विकास करूंगा।

ये तीन संकल्प नई शताब्दी अथवा नई सहस्राब्दी में विद्यमान इस 'नया' शब्द को सार्थकता दे सकते हैं।

०२ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नया प्रस्थान

नई दिशा की खोज जरूरी है। अर्थ और पदार्थ की दिशा में चलने वाले मनुष्य ने आसक्ति का जाल बुना है। मकड़ी अपने ही जाल में फंस गई है।

नई दिशा है चैतन्य की दिशा। उस दिशा में चलने वाला मनुष्य सहज ही अनासक्ति का वरण कर लेता है।

जीवन-यात्रा में पदार्थ को छोड़ा नहीं जा सकता। जिसे छोड़ा जा सकता है, वह है आसक्ति। उससे मुक्ति पाने के लिए जरूरी है नया प्रस्थान, आत्मानुभूति की दिशा में चरणविन्यास।

०३ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के प्रश्न

सब लोग जीते हैं पर इन प्रश्नों पर बहुत कम लोग विचार करते हैं—क्यों जीना है? कैसे जीना है? क्या इन प्रश्नों का विमर्श किए बिना अच्छा जीवन जीया जा सकता है? यदि जीया जा सकता है तो चिन्तन करने की आवश्यकता नहीं है। चिन्तन की अपेक्षा अचिन्तन की आवश्यकता अधिक है।

यदि इन प्रश्नों पर विचार किए बिना अच्छा जीवन जीया जा सके तो उन पर चिन्तन करना जरूरी है।

०४ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सार्थकता का प्रश्न

श्वास, प्राण और शरीर मिला है, इसलिए जीना है। यह जीने का एक पक्ष है। यह वास्तविकता है किन्तु सार्थकता नहीं।

जीने की सार्थकता है अपने-आप का ज्ञान, अपनी पहचान। वह चेतना को अन्तर्मुखी बनाने पर ही हो सकती है।

अन्तर्मुखी होने के लिए ध्यान उतना ही जरूरी है, जितना जरूरी है जीवन के लिए श्वास।

०५ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के स्तर-(१)

जीवन अनेक स्तरों पर जीया जाता है। इनमें पहला स्तर शारीरिक है। उस स्तर पर जीवन की अभिव्यक्ति इन्द्रियों के माध्यम से होती है। बाह्य जगत से सम्पर्क स्थापित करने का माध्यम है इन्द्रियां। इनमें दो इन्द्रियां प्रमुख हैं चक्षु और श्रोत्र। रूप और शब्द बाह्य जगत के प्रमुख अङ्ग हैं। चक्षु और श्रोत्र के द्वारा उनसे हमारा सम्पर्क स्थापित होता है। व्यक्ति अपनी वैयक्तिकता में रहता है, फिर शब्द और रूप के माध्यम से सामुदायिकता से जुड़ जाता है।

०६ जनवरी
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के स्तर-(२)

जीवन का दूसरा स्तर मानसिक है। मन का कार्यक्षेत्र है इन्द्रियों द्वारा गृहीत विषयों का विश्लेषण, निर्धारण, कल्पना, योजना, चिन्तन, मनन आदि। यह स्तर विकास की आधारभूमि है।

पशु-पक्षी जगत में कुछ जीव केवल इन्द्रिय सम्पन्न होते हैं और कुछ जीव मन से सम्पन्न भी होते हैं।

०७ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के स्तर-(३)

जीवन का तीसरा स्तर शक्ति की संहति का स्तर है। इस स्तर पर मनुष्य के आचार, व्यवहार आदि का निर्धारण होता है।

इस स्तर को मर्म, चक्र आदि शब्दों द्वारा प्रतिपादित किया गया है। प्रेक्षाध्यान के अनुसार यह चैतन्य केन्द्रों का स्तर है।

शरीर के जिस भाग में आत्मा के प्रदेश प्रचुर परिमाण में एकत्रित हो जाते हैं, उसका नाम है मर्म। इन्हीं के आधार पर मनुष्य अपने कार्यकलाप में ऊर्जा प्राप्त करता है।

०८ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्म जगत के नियम

सूक्ष्म नियमों को जानने के लिए हमारे पास तीन साधन हैं—

१. इन्द्रियों की पटुता का विकास

२. अतीन्द्रिय चेतना का विकास

३. सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी यन्त्रों का विकास।

प्रथम दो आन्तरिक साधन हैं। तीसरा बाहरी साधन है।

विज्ञान जगत सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों का विकास कर रहा है। इन्द्रिय पाटव और अतीन्द्रिय चेतना के विकास की साधना नहीं चल रही है। क्या यह चिंता का विषय नहीं है?

०६ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूल से सूक्ष्म की ओर-(१)

स्थूल से सूक्ष्म की ओर—यह ध्यान का आदि सूत्र है। कोई सीधा सूक्ष्म का आलम्बन ले, वह सफल नहीं हो सकता। प्रारम्भ स्थूल से करना होता है। अभ्यास करते-करते साधक सूक्ष्म तक पहुंच जाता है। सूक्ष्म का दर्शन होने पर स्थूल दर्शन की चेतना शून्य हो जाती है।

स्थूल जगत बहुत छोटा है। सूक्ष्म जगत बहुत विशाल है। जैसे-जैसे सूक्ष्म दर्शन की चेतना विकसित होती है, वैसे-वैसे नए विश्व का साक्षात्कार होने लग जाता है।

१० जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूल से सूक्ष्म की ओर-(२)

नए प्रस्थान की चर्चा करना सरल है, करना कठिन है। कठिनाई कृत नहीं है, स्वाभाविक है।

आवश्यकता की ओर ध्यान जाना सरल है। मूल्यों की ओर ध्यान जाना सरल नहीं है।

आवश्यकता का संबंध शरीर के साथ है। मूल्यों का संबंध व्यवहार के साथ है। व्यवहार शुद्धि की अनिवार्यता का अनुभव करना ही नया प्रस्थान है।

११ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूल की समस्या

हमारा बाह्य जगत से सम्पर्क इन्द्रियों के माध्यम से है। बाह्य जगत में स्थूल और सूक्ष्म दोनों तत्त्व हैं। इन्द्रियां स्थूल को जान सकती हैं सूक्ष्म को नहीं। इसलिए एक साधारण मनुष्य स्थूल जगत से और उसके नियमों से परिचित है। सूक्ष्म जगत उसके लिए अज्ञात है। समग्र दर्शन और समग्र चिन्तन के सामने यह एक बहुत बड़ी समस्या है। खोजना है इसका समाधान।

१२ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान-(१)

प्रेक्षाध्यान पद्धति केवल दर्शन और केवल ज्ञान की पद्धति है, समाधि या सामायिक की पद्धति है। केवलदर्शन और केवलज्ञान तक पहुंचने के लिए चित्तशुद्धि आवश्यक है। चित्तशुद्धि के लिए प्रेक्षाध्यान के विविध प्रयोगों का आलम्बन लिया जा सकता है—

१. दीर्घश्वास प्रेक्षा

२. समवृत्तिश्वास प्रेक्षा

३. शरीर प्रेक्षा

४. चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा

५. लेश्याध्यान

६. अनुप्रेक्षा

७. विचारप्रेक्षा

१३ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान-(२)

प्रेक्षाध्यान के द्वारा बाहरी और आन्तरिक परिवर्तन होते हैं—

१. श्वास की गति बदलती है।

२. लेश्या बदलती है।

३. भावधारा बदलती है।

४. हॉर्मोन्स बदलते हैं।

५. चिन्तन बदलता है।

६. आदत बदलती है।

७. स्वभाव बदलता है।

इनके बदलने पर दृष्टि बदल जाती है। व्यक्ति के जीवन में आध्यात्मिकता का विकास होता है। परिणामस्वरूप मानवीय संबंध भी मधुर बन जाते हैं।

१४ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान का ध्येय

ध्यान करने वाले व्यक्ति को ध्येय का निश्चय करना जरूरी है। ध्यान का मुख्य ध्येय है आध्यात्मिक विकास।

आध्यात्मिक विकास की अनेक रेखाएं हो सकती हैं—

१. मन को निर्मल करना

२. सुप्त चेतना और शक्ति को जागृत करना

३. वर्तमान में रहने का अभ्यास करना

४. मस्तिष्क की तरंगों पर नियन्त्रण

५. स्वतःचालित नाड़ी–संस्थान पर नियन्त्रण

६. विपाक या अन्तःस्रावी रसायनों पर नियन्त्रण

७. प्राणशक्ति का विकास, प्राण का ऐच्छिक प्रेषण।

१५ जनवरी

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान की तीन भूमिकाएं-(१)

प्रेक्षा की प्रथम भूमिका में शरीर प्रेक्षा की जाती है। यह ध्यान की पहली कक्षा है, जिसे धारणा कहा जा सकता है।

दूसरी भूमिका में प्रत्येक अवयव की प्रेक्षा दीर्घकाल तक की जाती है। यह ध्यान की दूसरी कक्षा है।

तीसरी भूमिका में प्रत्येक अवयव की प्रेक्षा दीर्घतर काल तक की जाती है। यह गहन ध्यान की तीसरी कक्षा है।

इस अभ्यास-क्रम से एकाग्रता को सघन किया जा सकता है और निर्विचार अवस्था तक पहुंचा जा सकता है।

१६ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान की कसौटियां

ध्यान जीवन का समग्र दर्शन है। उसका प्रभाव हर प्रवृत्ति पर होता है। प्रभाव को जानने की कुछ कसौटियां ये हैं—

१. आहार संयम

२. वाणी संयम

३. जागरूकता का विकास

४. दुःख अथवा प्रतिकूल संवेदन की कमी

५. दौर्मनस्य-इच्छाभिघात से होने वाले चित्तक्षोभ में कमी

६. श्वास की संख्या में कमी

७. संवेदनशीलता या करुणा का विकास

१७ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षा और कर्म सिद्धान्त

कर्म की दो अवस्थाएं होती हैं—बंध और उदय। उदय के क्षण में कर्म का फल मिलता है। उदय की दो अवस्थाएं हैं—

१. विपाक उदय

२. प्रदेश उदय

विपाकोदय के क्षण में कर्म-फल का स्पष्ट अनुभव होता है।

प्रदेशोदय के क्षण में कर्म-फल का अनुभव नहीं होता है।

ध्यान, जप और प्रयोगों द्वारा विपाकोदय को प्रदेशोदय में बदला जा सकता है।

१८ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान का उद्देश्य

प्रेक्षाध्यान की पद्धति में ध्यान का प्रमुख उद्देश्य है निर्जरा, आत्मशोधन, आश्रव-निरोध। जैसे-जैसे आत्मशोधन होता है वैसे-वैसे संवर अथवा निरोध अपने आप सध जाता है।

प्रासंगिक उद्देश्य चार हैं—

१. स्वभाव परिवर्तन

२. मानसिक शान्ति

३. आरोग्य

४. अतीन्द्रिय ज्ञान

१६ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान की अवस्थाएं

प्रेक्षाध्यान पद्धति में ध्यान की चार अवस्थाएं हैं—

१. सुप्त-जागृत २. जागृत

३. अप्रमत्त ४. वीतराग

सुप्त-जागृत अवस्था में—

१. मन का यातायात २. रंग का दर्शन

३. ज्योति का दर्शन

जागृत अवस्था में—

१. विचार तरंग का दर्शन

२. आभामण्डल का दर्शन

अप्रमत्त अवस्था में—

१. भाव तरंग का दर्शन

२. आवेग तरंग का दर्शन

३. तैजस शरीर का दर्शन

वीतराग अवस्था में—

१. सूक्ष्म शरीर (कर्म शरीर) का दर्शन

२. शुद्ध चैतन्य का दर्शन

२० जनवरी

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान का क्षेत्र

ध्यान चित्त की एक विशिष्ट अवस्था है। शरीर के जिस भाग पर चित्त को केन्द्रित किया जाता है, वही ध्यान हो जाता है। ध्यान का क्षेत्र पूरा शरीर है।

ध्यान एक प्रकार की बिजली है। ध्यान ऊपर जाता है, प्राण ऊपर चला जाता है। ध्यान नीचे जाता है, प्राण नीचे चला जाता है। जहां ध्यान वहां प्राण। ध्यान के साथ मन और मन के साथ पूर्ण इन्द्रिय-शक्तियां वहां चली जाती हैं जहां ध्यान ठहरता है।

२१ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान की दिशा

प्राचीन आचार्यों ने जैसे ध्यान की मुद्रा पर विचार किया वैसे ही दिशा पर भी विचार किया। पद्मासन, पर्यङ्कासन, सुखासन, वज्रासन आदि ध्यान के लिए उपयुक्त आसन हैं।

ध्यान के समय दृष्टि को नासाग्र पर टिकाना, श्वास-निःश्वास को मंद करना—ये सब ध्यान की मुद्रा के अङ्ग हैं।

ध्याता का मुंह पूर्व दिशा और उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए। इन दिशाओं की अभिमुखता ध्यान की सिद्धि में बहुत सहायक बनती है।

२२ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान की तीन शक्तियां

१. कल्पनाशक्ति—पहले स्पष्ट मानसिक चित्र खींचो। कल्पना सामग्री-संचय करती है।

२. इच्छा शक्ति—भावों की प्रबलता। भावों को ऑटोसजेशन द्वारा इच्छाशक्ति में बदला जा सकता है। सजेशन द्वारा भाव में उत्तेजना आती है। वही इच्छाशक्ति है, दृढ़ निश्चय है।

३. एकाग्रता की शक्ति—मन की शक्ति को एक ही दिशा में बहने दो। मन विषयान्तरित न हो। वह ध्येय की आकृति पर ही केन्द्रित रहे। मन में उत्पन्न विकल्पों का उत्तर मत दो। उन्हें द्रष्टाभाव से देखो।

२३ जनवरी
२०००

Jain Education InternationaFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान-वस्तु-(१)

ध्यान का प्रयोग प्रकृति-विश्लेषण के आधार पर किया जाता है तो अधिक उपयोगी होता है।

एक व्यक्ति रागात्मक प्रकृति का है, उसके लिए अशौच अनुप्रेक्षा का प्रयोग, अमनोज्ञ वस्तु का ध्यान उपयोगी होता है।

द्वेषात्मक प्रकृतिवाले के लिए मनोज्ञ वस्तु का ध्यान उपयोगी होता है।

रागात्मक प्रकृतिवाले व्यक्ति के लिए नीले रंग का ध्यान हितकर है। द्वेषात्मक प्रकृति वाले के लिए हरे रंग का ध्यान उपयोगी है।

२४ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान-वस्तु-(२)

ध्यान की तीन मुद्राएं हो सकती हैं—

१. खड़े रहकर किया जाने वाला ध्यान

२. बैठकर किया जाने वाला ध्यान

३. लेटकर किया जाने वाला ध्यान

ध्यान की इन मुद्राओं का प्रयोग प्रकृति-विश्लेषण के आधार पर किया जाना चाहिए। रागात्मक प्रकृतिवाले व्यक्ति के लिए खड़े-खड़े ध्यान करना उपयोगी है। उसके लिए गमनयोग, चलना हितकर है। अधिक बैठना हितकर नहीं है।

द्वेषात्मक प्रकृतिवाले व्यक्ति के लिए बैठकर ध्यान करना अधिक उपयोगी है।

लेटकर ध्यान करना दोनों प्रकृतिवालों के लिए उपयोगी है।

ध्यान की सफलता प्रकृति-विश्लेषण के आधार पर किये जाने वाले निर्णय पर बहुत अधिक निर्भर है।

२५ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान के साधन

ध्यान की सफलता के लिए तदर्थोपयुक्त, तदर्पितकरण और तद्भावनाभावित इन तीन शब्दों पर विमर्श करना जरूरी है।

१. ध्येय के अर्थ की जितनी स्पष्टता होगी, उतना ही ध्यान सफल होगा।

२. ध्यान के समय मन, वचन और शरीर का ध्येय के प्रति जितना समर्पण होगा, उतनी ही ध्यान में सफलता मिलेगी।

३. ध्येय की भावना से आत्मा को जितना भावित करेगा उतना ही ध्यान सहज सिद्ध होगा।

२६ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान और कल्पना

निर्विकल्प ध्यान ध्यान की उत्कृष्ट अवस्था है। विकल्प को कम करना भी ध्यान-सिद्धि के लिए इष्ट है।

अंतिम नियम को प्रारम्भ में लागू नहीं किया जा सकता। ध्यान का अभ्यास करते-करते विकल्प की न्यूनता हो सकती है, निर्विकल्प ध्यान हो सकता है किन्तु ध्यान के प्रथम चरण में कल्पना भी आवश्यक है।

कल्पना ध्यान को आगे बढ़ाती है। मन से कल्पना करें और उस पर ध्यान टिकाएं। इसमें रंग, उपवन, पेड़, समुद्र, बादल, आकाश आदि की कल्पनाएं बहुत उपयोगी होती हैं।

२७ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान के परिणाम-(१)

ध्यान का प्रारम्भ करने के कुछ मिनिट पश्चात् पूरे शरीर में जैविक प्रक्रिया बंद हो जाती है। कुछ घण्टों की गहरी नींद के बाद जो स्थिति बनती है, वह ध्यान काल में कुछ मिनिटों में ही बन जाती है। ऑक्सीजन की खपत भी कम हो जाती है।

ध्यान काल में त्वचा की अवरोध क्षमता नींद की अपेक्षा अधिक बढ़ जाती है। उस स्थिति में विद्युत तरंगें शरीर के भीतर प्रवेश नहीं कर पाती।

ध्यान के क्षणों में श्वास की गति, मस्तिष्क की विद्युत तरंगों तथा रोग प्रतिरोधक शक्ति में परिवर्तन होता है।

२८ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान के परिणाम-(२)

ध्यान के परिणाम का केवल वैज्ञानिक दृष्टि से नहीं, आध्यात्मिक दृष्टि से भी मूल्यांकन करना आवश्यक है—

१. बहिर्मुखी प्रवृत्ति अन्तर्मुखी बन जाती है।

२. भावशुद्धि हो जाती है।

३. जैसे-जैसे एकाग्रता सधती है, वैसे-वैसे दुःख कम हो जाता है।

४. कार्यक्षमता बढ़ती है।

५. अतीन्द्रिय शक्ति का विकास होता है।

२६ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यानसाधक की कसौटियां

ध्यान करने वाले व्यक्ति को परीक्षण करते रहना चाहिए। परीक्षण के लिए कुछ कसौटियां निर्धारित की गई हैं—

१. एकाग्रता का विकास हुआ या नहीं? यदि हुआ है तो किस स्तर तक, कितने क्षणों तक?

२. चित्त जागरूक बना या नहीं? यदि बना तो कितने क्षणों तक वह जागरूक है?

३. कषाय उपशान्त हो रहा है या नहीं?

४. स्वभाव में कोई परिवर्तन हो रहा है या नहीं?

५. क्षमता या संतुलन का विकास हो रहा है या नहीं?

६. दृष्टिकोण, चिन्तन और व्यवहार में कोई परिवर्तन हो रहा है या नहीं?

७. कोई सूक्ष्म अनुभव हो रहा है या नहीं?

ध्यान के साथ परीक्षण होता रहे तो आगे बढ़ने की सुविधा हो सकती है।

३० जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्म ध्यान-(१)

हमारी चेतना के असंख्य स्थान हैं। एक क्षण में हम एक पर्याय को ग्रहण करते हैं, दूसरे क्षण में दूसरे पर्याय को। ज्ञेय के नए-नए पर्याय और ज्ञान के भी नए-नए पर्याय। पहली बार हमने शक्ति केन्द्र पर ध्यान का प्रयोग किया तब एक पर्याय का अनुभव हुआ। दूसरी बार उसी केन्द्र पर ध्यान का प्रयोग करेंगे तब नए पर्याय का ग्रहण होगा। पूर्ववर्ती पर्याय और उत्तरवर्ती पर्याय के अंतर को समझना सूक्ष्म ध्यान का प्रयोग है।

३१ जनवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्म ध्यान-(२)

शरीर के जिस भाग में ध्यान केन्द्रित होता है उस भाग में प्राण का प्रवाह अधिक हो जाता है, स्पन्दन भी बढ़ जाते हैं। उन स्पन्दनों का अनुभव करना स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाना है।

पदस्थ ध्यान में ध्वनि प्रकम्पनों का अनुभव करना भी आवश्यक है। उसके लिए आवश्यक है वर्णों के उच्चारण और स्थान का बोध।

उच्चारण, स्थान का बोध केवल शब्द शास्त्र का विषय नहीं है, वह मंत्र शास्त्र व ध्यान शास्त्र का भी विषय है।

०१ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसम्पदा

भारतीय चिंतन में दीक्षा का बहुत महत्त्व है। संकल्पसिद्धि और सफलता का अमोघ उपाय है। दीक्षा के साथ संकल्प की चेतना जुड़ी हुई है। प्रेक्षाध्यान का अभ्यास करने वाला व्यक्ति प्रारम्भ में उपसंपदा—प्रेक्षाध्यान की दीक्षा स्वीकार करता है।

उपसम्पदा के पांच संकल्प हैं अथवा अभ्यास के लिए पांच व्रत हैं—

१. भावक्रिया

२. प्रतिक्रिया विरति

३. मैत्री

४. मिताहार

५. मितभाषण

एकाग्रता और निर्विचार होने की साधना पृष्ठभूमि के बिना सफल नहीं हो सकती। उपसम्पदा उसकी पृष्ठभूमि है।

०२ फरवरी
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावक्रिया-(१)

जिस क्रियाकाल में जो भाव होता है, वह भाव पूर्ण क्रियाकाल में बना रहता है। उस अवस्था में होने वाली क्रिया का नाम भावक्रिया है।

क्रिया और मन दोनों भाव द्वारा संचालित होते हैं। भावक्रिया में भाव, मन और क्रिया तीनों एक धारा में प्रवाहित होते हैं, तीनों का सामञ्जस्य हो जाता है।

०३ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावक्रिया-(२)

क्रिया का क्षण वर्तमान का क्षण है। क्रिया अतीत में नहीं होती, केवल वर्तमान में ही होती है।

भावक्रिया का एक अर्थ है वर्तमान में रहना। वर्तमान में रहने का अर्थ है क्रिया के साथ भावधारा और मन का संयोजन बनाए रखना।

यदि क्रियाकाल में भावक्रिया के अनुरूप न रहे और मन अन्यत्र चक्कर लगाता रहे, इस स्थिति में क्रिया, भाव और मन का वियोजन होता है, तनाव को पैदा होने का अवसर मिल जाता है।

०४ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावक्रिया-(३)

कोई आदमी किसी कार्य को प्रारम्भ करता है, उसे आदि से अन्त तक उस कार्य की स्मृति नहीं रहती। इस विस्मृति का नाम है प्रमाद। जागरूकता का अर्थ है सतत स्मृति अथवा अप्रमाद।

भावक्रिया का दूसरा अर्थ है सतत स्मृति अथवा जागरूकता। कल्पना करें—किसी व्यक्ति ने आधा घण्टा के लिए जप का प्रयोग शुरू किया। उस आधा घण्टा में निर्धारित जप चले, दूसरा कोई विकल्प न आए, यह बहुत कम संभव है। जिस व्यक्ति ने भावक्रिया का अभ्यास नहीं किया है उसके लिए वह संभव नहीं है। यह किसी अतिशयोक्ति के बिना कहा जा सकता है।

०५ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावक्रिया-(४)

जो काम करें, जानते हुए करें। यह भावक्रिया का तीसरा अर्थ है।

मन के तीन प्रकार हैं—

१. तन्मन—ध्येय में लगा हुआ मन

२. तदन्यमन—ध्येय से भिन्न वस्तु में लगा हुआ मन

३. नोअमन—लक्ष्यशून्य व्यापार

क्रियाकाल में मन, की जाने वाली क्रिया में लगा रहता है। उस स्थिति को कहा जा सकता है जानते हुए करना। तन्मन इस अवस्था का वाचक है।

०६ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावक्रिया-(५)

भावक्रिया ध्यान का साधन भी है और स्वय ध्यान भी है।

वह जीवन की सफलता है और स्वयं की सफलता है। ध्यान का प्रयोग कालबद्ध है। कोई भी व्यक्ति २४ घण्टे ध्यान नहीं कर सकता। भावक्रिया का प्रयोग काल से प्रतिबद्ध नहीं है। वह दीर्घकाल तक किया जा सकता है। २४ घण्टे भी किया जा सकता है। चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते हर क्रिया के साथ प्रयोग हो सकता है। जरूरी है अभ्यास और संकल्प। उसके बिना वह संभव नहीं।

०७ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिक्रिया विरति

प्रतिक्रिया कायिक, वाचिक और मानसिक—इन तीन स्तरों पर होती है। वह अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार की होती है। उसका मनोकायिक संतुलन पर प्रभाव होता है।

प्रतिक्रिया का परिणाम उसकी तरतमता के आधार पर होता है। मंद प्रतिक्रिया का परिणाम मंद और तीव्र प्रतिक्रिया का परिणाम तीव्र होता है। उसे पत्थर की रेखा, मिट्टी की रेखा, बालू की रेखा और पानी की रेखा के उदाहरण से समझा जा सकता है।

प्रतिक्रिया के परिणाम को ध्यान में रखकर ध्यान करने वाले व्यक्ति को उससे बचने का अभ्यास करना चाहिए।

०८ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैत्री

मित्र और शत्रु ये दोनों व्यवहार की भूमिका पर चलने वाले शब्द हैं। प्रिय व्यक्ति मित्र और अप्रिय व्यक्ति शत्रु बन जाता है। अध्यात्म की भाषा में मित्र का अर्थ है हितचिन्तक और मैत्री का अर्थ है हितचिन्तन।

दूसरे के अहित का चिन्तन करने वाला ध्यान का अधिकारी नहीं हो सकता। इसलिए ध्यान-साधना के साथ-साथ मैत्री का अभ्यास करना आवश्यक है।

०६ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिताहार

आहार का संबंध केवल पोषण और स्वास्थ्य के साथ ही नहीं है, उसका सम्बन्ध मन और भाव के साथ में है।

ध्यान करने वाले व्यक्ति को आहार के विषय में सामान्य जानकारी अवश्य होनी चाहिए।

मित आहार आहारबोध का सांकेतिक शब्द है। आहार में मात्रा का विवेक रखने वाला व्यक्ति ध्यान की साधना में प्रगति कर सकता है।

१० फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मितभाषण

वाणी हमारे विकास का माध्यम है। साधना की दृष्टि से विचार करें तो वह चंचलता बढ़ाने वाली है। जो अचंचल होने की साधना करना चाहता है उसके लिए वाणी की चंचलता को कम करना जरूरी है।

मनुष्य के बहुत सारे प्रयोजन वाणी से जुड़े हुए हैं। वह सदा सर्वदा मौन रहे यह संभव नहीं है। फिर भी यथावकाश यथोचित वाणी का संयम करे, यह आवश्यक है। मितभाषण उसी का प्रयोग है।

११ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मौन

मौन का अर्थ है वाग्-विच्छेद। बोलने के दो प्रकार हैं—अन्तर्जल्प और बहिर्जल्प।

सामान्यतः बहिर्जल्प—बाहर न बोलने को मौन माना जाता है। पूर्ण मौन के लिए यह पर्याप्त नहीं है।

विकल्प का आधार है शब्द। स्वरयन्त्र सक्रिय है और अन्तर्जल्प हो रहा है, उस स्थिति में शब्द विकल्प को पैदा करता रहता है। वर्ण को वर्णहीन नाद के रूप में परिणत कर विकल्प को शान्त किया जा सकता है।

१२ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हम्-(१)

प्रेक्षाध्यान केवल एकाग्रता का प्रयोग ही नहीं है, वह जीवन का समग्र दर्शन है। उसमें ध्वनि, मंत्र आदि के विशेष प्रयोग भी करवाये जाते हैं। 'अर्हम्' उसका एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। 'ॐ' जैसे परमेष्ठी का वाचक है वैसे ही 'अर्हम्' भी परमेष्ठी का वाचक है। इससे ध्यान की शुद्धि होती है— 'एतेनाद्भुतमंत्रेण ध्यानशुद्धिः परा भवेत्' नासाग्र पर इसका ध्यान करना बहुत उपयोगी है। 'ॐ अर्हं'—संयुक्त रूप में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

१३ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हम्-(२)

अर्हं प्रेक्षाध्यान का प्रमुख जप मंत्र अथवा प्रतीक मंत्र है। इसमें प्रथम अक्षर है अकार। कण्ठ उसका उच्चारण स्थान है। 'अ' के उच्चारण के समय कण्ठ में प्रकम्पनों का अनुभव किया जा सकता है।

'र' का उच्चारण स्थान मूर्धा है। वहां रकार के प्रकम्पनों का अनुभव किया जा सकता है।

'ह' का उच्चारण स्थान कण्ठ है। उसके प्रकम्पन कण्ठ में होते हैं।

ध्यान करने वाला सूक्ष्मता के साथ 'अर्हं' का अनुभव करे तो कण्ठ और मूर्धा इन दोनों स्थानों को सक्रिय किया जा सकता है।

१४ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हम्-(३)

वर्ण की दृष्टि से समीक्षा करें—

प्रथम अक्षर 'अ' है। इसका उच्चारण स्थान कण्ठ है। अभय का विकास करने के लिए इसका ध्यान बहुत उपयोगी है।

दूसरा अक्षर 'र' है। इसका आश्रय स्थान मूर्धा है। तैजस विकास के लिए इसका ध्यान बहुत उपयोगी है।

तीसरा अक्षर 'ह' है। इसका भी विशुद्धि केन्द्र से संबंध है। यह महाप्राण वर्ण है। वृत्ति परिष्कार करने के लिए इसका ध्यान बहुत उपयोगी है।

'अर्हं' बिन्दु से संयुक्त है इसका संबंध नासिका और मस्तक दोनों से है। मस्तिष्कीय विकास करने के लिए इसका ध्यान बहुत उपयोगी है।

१५ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हम्-(४)

'अर्हम्' इस मंत्र के जप में 'ह' का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। पांच तत्त्वों में अंतिम तत्त्व है आकाश। उसका बीजमंत्र है 'ह'। योग विद्या के अनुसार अन्य वर्ण शरीर के नियत भाग को प्रभावित करते हैं। 'ह' का उच्चारण पूरे शरीर को प्रभावित करता है। आकाश तत्त्व का स्थान कण्ठ है। वही चयापचय (Matabolism) की क्रिया का स्थान है। जैसे चयापचय की क्रिया का पूरे शरीर से संबंध है वैसे ही हकार के उच्चारण का पूरे शरीर से संबंध है।

१६ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाप्राण ध्वनि-(१)

ज्ञान तन्तुओं को सक्रिय करने के लिए महाप्राण ध्वनि का प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है। नाक और मस्तिष्क के तंतुओं का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। गंध की पहचान करने वाला मस्तिष्क का भाग बहुत पुराना है। इसे शरीरशास्त्र की भाषा में घ्राण मस्तिष्क (राइनेन्केफॉलन) कहा जाता है। इसमें भय, क्रोध, आक्रमण और कामेच्छा के केन्द्र अवस्थित हैं।

महाप्राण ध्वनि के द्वारा घ्राण मस्तिष्क की प्रवृत्तियों पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है।

१७ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाप्राण ध्वनि–(२)

महाप्राण ध्वनि का अभ्यास एकाग्रता के लिए बहुत उपयोगी है। इसका प्रयोग करते समय अन्य विकल्प और विचार उपशान्त हो जाते हैं। तनाव-मुक्ति के लिए भी इसका बहुत महत्त्व है। ध्वनि, भावना और एकाग्रता—तीनों का योग तनाव को विसर्जित कर देता है।

महाप्राण ध्वनि के प्रभावों को सूत्रशैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

१. मस्तिष्क के ज्ञानतन्तु पुष्ट होते हैं।

२. नाक के ज्ञानतन्तु प्रभावित होते हैं।

३. मानसिक तनाव दूर होता है।

४. क्रोध का आवेश कम होता है।

५. रक्तचाप संतुलित होता है।

१८ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुरङ्ग कायोत्सर्ग

कायोत्सर्ग का शाब्दिक अर्थ है काया का उत्सर्ग करना। बोलना, सोचना ये सब शरीर से जुड़े हुए हैं। इसलिए कायोत्सर्ग वाचिक और मानसिक भी होता है। इस आधार पर चतुरङ्ग कायोत्सर्ग की व्यवस्था की गई है—

१. शारीरिक—शिथिलीकरण।

२. वाचिक—स्वरयन्त्र का शिथिलीकरण, कण्ठ का कायोत्सर्ग।

३. मानसिक—विचारप्रेक्षा।

४. भावात्मक—ममत्वविसर्जन 'मैं शरीर नहीं हूं' इस भेदविज्ञान का अभ्यास।

१६ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग की पांच भूमिकाएं

कायोत्सर्ग के लिए दीर्घकालीन अभ्यास जरूरी है। अभ्यास की कालावधि के आधार पर कायोत्सर्ग की पांच भूमिकाएं बनती हैं—

१. सुझाव—(Auto-suggestion) पूर्ण एकाग्रता के साथ सुझाव देना।

२. प्राणशक्ति के प्रकम्पनों का अनुभव और प्राणशक्ति के प्रवाह का अनुभव।

३. शरीर और प्राणप्रवाह के भेद का अनुभव। तैजस शरीर या प्राणविद्युत का अनुभव।

४. कर्म शरीर के प्रकम्पनों का अनुभव।

५. शुद्ध चैतन्य का अनुभव।

२० फरवरी
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(१)

कायोत्सर्ग का प्रयोग खड़े-खड़े, बैठे-बैठे और लेटे-लेटे—तीनों अवस्थाओं में किया जाता है। शयन अवस्था में किया जाने वाला कायोत्सर्ग दो प्रकार का होता है—

१. उत्तानशयन

२. पार्श्वशयन

पार्श्वशयन कायोत्सर्ग दो प्रकार से किया जाता है—

१. बाईं करवट से लेटकर किया जाने वाला कायोत्सर्ग

२. दाईं करवट से लेटकर किया जाने वाला कायोत्सर्ग।

उच्च रक्तचाप की स्थिति में दाएं पार्श्वशयन की मुद्रा में कायोत्सर्ग करना चाहिए।

निम्न रक्तचाप की स्थिति में बाएं पार्श्वशयन की मुद्रा में कायोत्सर्ग करना चाहिए।

२१ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(२)

शरीर के प्रत्येक अवयव में चेतना है, प्राण का प्रवाह है। चेतना है इसलिए प्रत्येक अवयव हमारे निर्देशों, सुझावों का पालन करता है। प्राण का प्रवाह है इसलिए प्रत्येक अवयव में क्रिया है, शक्ति है।

शरीर को शिथिल कर कायोत्सर्ग की स्थिति में जो सुझाव दिया जाता है वह शीघ्र क्रियान्वित हो जाता है। जिस अवयव पर ध्यान दिया जाता है, उसकी शक्ति बढ़ जाती है। कायोत्सर्ग शरीर-प्रेक्षा की पूर्व अवस्था है। इस अवस्था में दिया जाने वाला सुझाव बहुत ही कार्यकारी होता है।

२२ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(३)

कायोत्सर्ग के अनेक रूप हैं। वह पूरे शरीर का भी किया जा सकता है, एक-एक अवयव का भी किया जा सकता है।

दाएं पैर के अंगूठे पर ध्यान केन्द्रित कर शिथिलीकरण किया जाए तो वह मानसिक एकाग्रता, मानसिक शान्ति और प्राण ऊर्जा के विकास का महत्त्वपूर्ण प्रयोग बनता है।

२३ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(४)

शरीर और मन परस्पर गुंथे हुए हैं। शरीर की चंचलता मन को चंचल बनाती है। मन की चंचलता शरीर को चंचल बनाती है।

शरीर और मन, इन दोनों में पहला स्थान शरीर का है। मन की सामग्री का ग्रहण और संग्रहण करने वाला शरीर है। जो व्यक्ति मन की चंचलता को कम करना चाहे, उसे सर्वप्रथम शरीर की स्थिरता को साधना जरूरी है। कायोत्सर्ग का एक अर्थ है स्थिरता।

२४ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(८)

मनुष्य का शरीर तनाव और शिथिलता—इन दो स्थितियों से गुजरता है। कभी-कभी स्नायविक तनाव आवश्यक होता है पर दीर्घकालिक तनाव समस्या बन जाता है।

शरीर स्नायविक और मांसपेशीय तनाव से मुक्त रहता है। इस अवस्था में शिथिलता सधती है। शिथिलता के लिए केवल स्थिर रहना ही पर्याप्त नहीं है। तनाव मुक्ति का अनुभव अपने आप शिथिलता की अनुभूति करा देता है। इस अवस्था में शरीर की रासायनिक और विद्युतीय प्रणाली सहज हो जाती है।

२५ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(६)

'शरीर मेरा है'—यह ममत्व की ग्रन्थि जितनी पुष्ट होती है उतना ही तनाव होता है।

शरीर के विसर्जन का भाव—'शरीर मेरा नहीं है', यह भाव जैसे-जैसे पुष्ट होता है वैसे-वैसे ममत्व की ग्रन्थि खुलती जाती है।

यह ममत्व का विसर्जन कायोत्सर्ग का प्राणतत्त्व है। यह जितना सिद्ध होगा, उतनी ही स्थिरता और शिथिलता सिद्ध होगी।

२६ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायोत्सर्ग-(७)

जैन साधना पद्धति का प्रारम्भ बिन्दु है कायोत्सर्ग और अंतिम बिन्दु है कायोत्सर्ग। यह ध्यान के प्रत्येक प्रयोग के पूर्व अथवा ध्यान की पूर्व कालावधि में करणीय है। इसका महत्त्व जितना ध्यान की दृष्टि से है, उतना ही स्वास्थ्य की दृष्टि से भी है। हृदयरोग, उच्च रक्तचाप आदि की स्थिति में कायोत्सर्ग बहुत उपयोगी है। डॉक्टर जिन-जिन स्थितियों में पूर्ण विश्राम का निर्देश देते हैं, उन सब स्थितियों में कायोत्सर्ग का उपयोग किया जा सकता है। हड्डी टूटने पर पट्टा बांधा जाता है, उस स्थिति में भी अस्थिभंग के स्थान पर कायोत्सर्ग का प्रयोग किया जाए तो अस्थिसंधान की गति त्वरित हो सकती है।

२७ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कण्ठ का कायोत्सर्ग

शरीर, वाणी, मन और भाव इन चारों पर कायोत्सर्ग का प्रयोग किया जा सकता है। मौन करने वाले तथा मानसिक शांति की चाह करने वाले व्यक्ति के लिए कण्ठ का कायोत्सर्ग बहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे स्वरयन्त्र की सक्रियता कम होती है। सक्रियता की अवस्था में विचार, विकल्प पैदा होते रहते हैं। निष्क्रियता की अवस्था में वे शांत हो जाते हैं।

२८ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनाव-(१)

तनाव का मुख्य हेतु है भावात्मक आवेश। इसका दूसरा कारण है शरीर और मन की अधिक चंचलता। प्राचीन साहित्य में संताप का उल्लेख मिलता है। वर्तमान में उसे तनाव कहा जाता है।

तनाव तीन प्रकार का होता है—

१. शारीरिक २. मानसिक ३. भावात्मक

प्रतिकूल परिस्थिति भी तनाव पैदा करती है—

१. भौतिक समस्या से उत्पन्न तनाव
२. आर्थिक समस्या से उत्पन्न तनाव
३. पारस्परिक व्यवहार से उत्पन्न तनाव
४. संवेग की अधिकता से उत्पन्न तनाव
५. संवेदनशीलता की अधिकता से उत्पन्न तनाव
६. चंचलता की अधिकता से उत्पन्न तनाव
७. प्रवृत्ति की अधिकता से उत्पन्न तनाव

तनाव के विषय में वर्तमान विज्ञान का चिंतन भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

२९ फरवरी
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनाव-(२)

शरीर विज्ञान में तनाव के अनेक कारण बतलाए गए हैं—

१. श्वास में ऑक्सीजन कम होता है तब मस्तिष्क में तनाव हो जाता है।

२. अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र (Sympathetic Nervous System) की अधिक सक्रियता, एड्रिनेलिन का स्राव और थायरॉक्सिन का अधिक स्राव ये तनाव के कारण बनते हैं।

इस प्रकार के तनाव को कम करने के लिए दीर्घश्वास, कायोत्सर्ग और संवेग-संतुलन का प्रयोग महत्त्वपूर्ण है।

०१ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनाव-(३)

भावनात्मक तनाव सर्वप्रथम हाइपोथेलेमस को प्रभावित करता है। उससे पिट्युइटरी (पीयूष) ग्रन्थि उत्तेजित होती है। पिट्युइटरी ग्रन्थि के स्राव से एड्रीनल ग्रन्थि प्रभावित होती है। ये दोनों ग्रन्थियां भावनात्मक और मानसिक आवेशों से प्रभावित होकर रस में दूषित रसायनों (हॉर्मोन्स) का स्राव करती हैं। वे स्राव रोग के हेतु बनते हैं।

०२ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनाव और कायोत्सर्ग

तनाव और शिथिलीकरण—ये दोनों आवश्यक हाते हैं। तनाव के बिना पराक्रम का प्रस्फोट नहीं होता, इसलिए विशेष प्रसंगों में तनाव की भी उपयोगिता है। किन्तु दीर्घकाल तक तनाव का रहना हानिकारक है।

कायोत्सर्ग के प्रारम्भ में लेटकर या खड़े होकर हाथ और पैर को तनाव दिया जाता है। तनाव के पश्चात् शिथिलीकरण सहज हो जाता है।

तनाव विसर्जन के लिए कायोत्सर्ग और कायोत्सर्ग की अवस्था में दीर्घश्वास का प्रयोग बहुत ही उपयोगी है।

०३ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्यात्रा

अन्तर्मुख होने का एक महत्त्वपूर्ण उपाय है अन्तर्यात्रा। पृष्ठरज्जु का प्रदेश ध्यान-साधना की दृष्टि से बहुत मूल्यवान है। योगशास्त्र के अनुसार इड़ा और पिंगला का प्राण-प्रवाह शरीर की सक्रियता का प्रवाह है। सुषुम्ना निष्क्रियता या निवृत्ति का प्राणप्रवाह है। एकाग्रता, सघन एकाग्रता और निर्विचारता—इन तीनों की साधना सुषुम्ना के प्राणप्रवाह की अवस्था में सम्यक् प्रकार से हो सकती है।

०४ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुषुम्ना-(१)

सुषुम्ना सूक्ष्म शरीर में प्रवेश करने का मार्ग है। यह रीढ़ के भीतर अवस्थित है। यह रीढ़ के सिरे से प्रारम्भ होकर ऊपर तक जाती है।

स्वरोदय के अनुसार सुषुम्ना के समय दोनों स्वर एक साथ चलते हैं। इसकी गति के समय केवल ध्यान और आन्तरिक विकास का प्रयोग करना चाहिए। चर और स्थिर सब प्रकार का कार्य इस अवधि में वर्जनीय है।

०५ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुषुम्ना-(२)

प्राणप्रवाह का एक चक्र है। इड़ा का प्राणप्रवाह चलता है उसके बाद पिंगला का प्राणप्रवाह चलने लग जाता है। इनके मध्य में सुषुम्ना का प्राणप्रवाह भी चलता है। स्वस्थ व्यक्ति की सुषुम्ना के प्राणप्रवाह का समय इस प्रकार निर्दिष्ट है—

दिन का समय	रात का समय
६.०० बजे	७.३० बजे
७.३० बजे	९.०० बजे
९.०० बजे	१०.३० बजे
१०.३० बजे	१२.०० बजे
१२.०० बजे	१.३० बजे
१.३० बजे	३.०० बजे
३.०० बजे	४.३० बजे
४.३० बजे	
६.०० बजे	

०६ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्मुखता के नियम-(१)

दो प्रकार के व्यक्ति होते हैं—बहिर्मुखी और अन्तर्मुखी। बहिर्मुखता का सूचक शब्द है भौतिकता और अन्तर्मुखता का सूचक शब्द है अध्यात्म।

अन्तर्मुखी होने के लिए अन्तर्मुखता के नियम को जानना जरूरी है। उसके लिए समय-बोध और शरीर का तापमान, मस्तिष्कीय संतुलन और योग द्वारा निर्दिष्ट नाड़ियां—इन सबका ज्ञान आवश्यक है।

०७ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्मुखता के नियम-(२)

१. मध्यरात्रि और प्रातः छह बजे शरीर का तापमान निम्नतम रहता है। शक्ति की उत्तेजना कम होने के कारण इस समय अन्तर्मुखता शीघ्र होती है। मस्तिष्क का संतुलन भी बढ़ता है।

२. दिन के समय शरीर के दाएं भाग की चमड़ी का तापमान अधिक होता है। रात्रि में बाएं भाग की चमड़ी का तापमान भी अधिक होता है।

३. दिन में स्वस्थ व्यक्ति पर दाएं भाग से संबद्ध पिंगला (बहिर्मुखता लाने वाली) नाड़ी का प्रभाव होता है। रात में इड़ा का प्रभाव होता है। योगी नाड़ी-शुद्धि द्वारा इड़ा को दिन में, पिंगला को रात में चलाता है। इससे सुषुम्ना जागती है।

०८ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्म निरीक्षण

अपनी आदतों और प्रवृत्तियों का निरीक्षण करो। विश्लेषण करो। स्वयं प्रयत्न करो, फिर मूल्याङ्कन करो। निष्कर्ष निकालो—मेरी प्रवृत्ति से मुझे समाधि मिली या नहीं?

संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं का निरीक्षण करो—क्रोध क्यों आता है? उदासी क्यों आती है? ठेस क्यों लगती है? प्रसन्नता क्यों होती है? कुण्ठा क्यों होती है? अवसाद क्यों होता है?

०६ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मदर्शन

आत्मा के द्वारा आत्मा को देखो। यह आत्मदर्शन का एक संकेत है। चैतन्य जगत में आत्मा एक है। वह कषाय से परिवृत्त भी है। उसके अनेक रूप बन जाते हैं।

देखने वाली है चैतन्य स्वरूप आत्मा और उसके नाना रूप दृश्य बनते हैं।

आत्म दर्शन—

मैं कौन हूं	मैं कहां हूं
• वासना पुरुष	काम केन्द्र की चेतना सक्रिय
• इच्छा पुरुष	नाभि की चेतना सक्रिय
• आनन्द पुरुष	हृदय की चेतना सक्रिय
• प्राण पुरुष	नासाग्र की चेतना सक्रिय
• प्रज्ञा पुरुष	दर्शन केन्द्र की चेतना सक्रिय

१० मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्म-शोधन

आत्म-शोधन के अनेक उपाय हैं—उपवास, स्वाध्याय, ध्यान आदि। इनमें सामान्यतः उपवास कठिन है। इसका सम्बन्ध शरीर के साथ है। इसलिए न खाने में कठिनाई का अनुभव होता है।

स्वाध्याय और ध्यान का सम्बन्ध मुख्यतः एकाग्रता के साथ है। इनमें प्रत्यक्षतः कोई शारीरिक बाधा नहीं है। मानसिक चंचलता इनमें बाधा उत्पन्न करती है।

आवश्यकता है भूख पर विजय पाने का अभ्यास किया जाए। उसमें अधिक आवश्यक है मानसिक चंचलता पर विजय पाने की।

११ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास कैसे लें?

अनैच्छिक श्वास स्वयं आता है। जब स्वयं आने वाला श्वास दीर्घ न हो, उस समय प्रयत्नपूर्वक उसे दीर्घ किया जाता है।

वास्तव में दीर्घश्वास ही सहज श्वास है। बच्चे का श्वास सहज श्वास होता है। एक बच्चा सोया हुआ है। श्वास लेते समय उसका पेट फूलता है और छोड़ते समय सिकुड़ता है। यह दीर्घश्वास है, यही सहज श्वास है। शरीरशास्त्र की भाषा में इसे Diaphramatic Breathing या Abdominal Breathing कहते हैं।

१२ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास के तीन रूप

जो विचार श्वास के साथ भीतर जाता है वह तीन मिनिट में शरीर के प्रत्येक अणु पर अपना प्रभाव छोड़ जाता है।

श्वास की तीन क्रियाएं होती हैं

१. पूरक २. रेचक ३. संयम (कुम्भक)

पूरक के समय सोचो—प्राणशक्ति भीतर जा रही है।

श्वास सयम के समय सोचो—प्राणशक्ति पूरे शरीर में व्याप्त हो गई है।

रेचक के समय मन को खाली रखो। इसका प्रयोग किसी भी गुण के विकास के लिए किया जा सकता है।

१३ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास दर्शन की भूमिकाएं

श्वास प्राणशक्ति का वाहक है—यह हठयोग का मत है।

श्वास ऑक्सीजन का वाहक है—यह वैज्ञानिक मत है।

श्वास स्पर्श, रस, गंध और वर्ण का वाहक है—यह भगवान् महावीर का सिद्धान्त है।

श्वास के स्पर्श का अनुभव—यह एकाग्रता की पहली भूमिका है।

श्वास के रंग का अनुभव—यह एकाग्रता की दूसरी भूमिका है।

श्वास के गंध का अनुभव—यह एकाग्रता की तीसरी भूमिका है।

श्वास के रस का अनुभव—यह एकाग्रता की चतुर्थ भूमिका है।

१४ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास का आलम्बन

अशुद्ध आलम्बन पर होने वाली एकाग्रता ध्यान है पर वह साधना के क्षेत्र में वांछनीय नहीं है।

राग-द्वेष से मुक्त आलम्बन वाली एकाग्रता ही अध्यात्म साधना के क्षेत्र में वांछनीय है।

ध्यान के प्रारम्भ में श्वास का आलम्बन लिया जाता है। श्वास के प्रति हमारा न राग होता है और न द्वेष। वीतराग दशा की ओर प्रस्थान करने के लिए श्वास का आलम्बन एक महत्त्वपूर्ण उपाय है।

१५ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीर्घश्वास

श्वास ऐच्छिक (Voluntaury) और अनैच्छिक (involuntary) दोनों प्रकार का होता है। छोटा बच्चा अनैच्छिक श्वास लेता है फिर भी उसका श्वास लम्बा होता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है वैसे-वैसे उसमें आवेश और उत्तेजनात्मक भाव बढ़ते हैं। उसका श्वास छोटा हो जाता है।

छोटा श्वास शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य दोनों के लिए बाधक बनता है। इसलिए जरूरी है दीर्घश्वास का अभ्यास।

१६ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास और एकाग्रता

योग में श्वास के विविध प्रयोग काम में लिए जाते हैं। श्वास मंद होता है। शरीर की क्रिया मंद हो जाती है। मन की गति या चंचलता कम हो जाती है।

मंद श्वास के साथ किए जाने वाले कायोत्सर्ग और एकाग्रता के प्रयोग बहुत सफल होते हैं।

श्वास आता है—यह स्वाभाविक क्रिया है। श्वास के प्रति हम जागरूक होते हैं तब श्वास एकाग्रता की साधना का प्रयोग बन जाता है।

दीर्घश्वास प्रेक्षा प्रेक्षाध्यान का महत्त्वपूर्ण प्रयोग है।

१७ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लयबद्ध श्वास

१. लयात्मक श्वास मस्तिष्क को उचित मात्रा में ऑक्सीजन पहुंचाता है। (मस्तिष्क के लिए ऑक्सीजन शरीर से तीन गुना अधिक आवश्यक है।)

२. लयबद्ध श्वास से शरीर और मस्तिष्क को आराम मिलता है।

३. अपान (कामवृत्ति) पर नियन्त्रण होता है।

४. संवेद (Sense energy) का नियन्त्रण होता है।

५. संवेग (Emotion) पर नियन्त्रण होता है।

६. विचार पर नियन्त्रण होता है।

१८ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास : स्पर्श का अनुभव

श्वास और रंग—इन सबको जानने तथा इनका अनुभव करने के लिए जरूरी है एकाग्रता।

एकाग्रता के लिए श्वास का आलम्बन जरूरी है। श्वास की विविध अवस्थाओं का अनुभव उसे और आगे बढ़ाता है।

श्वास का एक गुण है स्पर्श। रंग का अनुभव करने के लिए अधिक एकाग्रता चाहिए। स्पर्श का अनुभव कम एकाग्रता की स्थिति में भी किया जा सकता है। पूरक के समय श्वास की शीतलता का अनुभव होता है। रेचक के समय श्वास की उष्णता का अनुभव होता है।

१९ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास और श्वास-प्राण

आदमी श्वास लेता है तब वायु भीतर जाती है। यह बहुत प्राचीन मान्यता है। आधुनिक मान्यता यह है कि श्वास के साथ प्राणवायु (oxygen) भीतर जाती है।

श्वास के साथ प्राणवायु जाती है, इसका तात्पर्य है श्वास के साथ प्राणशक्ति जाती है।

श्वास और श्वास-प्राण एक नहीं है। श्वास श्वास-प्राण द्वारा गृहीत होता है। प्रत्येक कोशिका को जैसे प्राणवायु की जरूरत है वैसे ही प्रत्येक कोशिका को प्राणशक्ति की जरूरत है।

२० मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास और हृदय

श्वास से प्रश्वास को दुगुना या चौगुना करके श्वसन को नियंत्रित किया जा सकता है। इससे मस्तिष्क को विश्राम या शिथिलीकरण प्राप्त होता है क्योंकि श्वास बाहर छोड़ने में किसी भी प्रकार का मांसपेशीय तनाव नहीं पड़ता। हृदय दर इसमें स्वभावतः निम्न रहती है। इस प्रकार श्वसन के अभ्यास से कालान्तर में मस्तिष्कीय तरंगें प्रभावित होती हैं जिससे शरीर के अन्य अंग व प्रणालियां भी प्रभावित होती हैं।

२१ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समवृत्ति श्वास

नाड़ी शुद्धि का विकल्प है समवृत्ति श्वास। तीन मास अथवा छः मास तक निरन्तर समवृत्ति श्वास का प्रयोग किया जाए।

प्रयोग का कालमान कम से कम दस मिनिट होना चाहिए।

योग साधना के अति अभ्यास अथवा किसी त्रुटि के कारण जो शारीरिक अथवा मानसिक अव्यवस्था हो जाती है उसके लिए यह प्रयोग नाड़ी शोधन प्राणायाम के समान लाभ प्रदान करता है।

२२ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर के रहस्य

मनुष्य के शरीर की रचना अद्भुत है, बहुत विलक्षण है। उसके बारे में हमें पर्याप्त जानकारी नहीं है। अवयवों के बारे में एक डॉक्टर को बहुत अच्छी जानकारी हो सकती है। किन्तु मानवीय शरीर अङ्गों का पिण्डमात्र ही नहीं है, उसमें प्राण और चेतना भी है।

नाड़ीतन्त्र और अन्तःस्रावी ग्रन्थियों ने शरीर को जैसे रहस्यपूर्ण बनाया है वैसे ही प्राण और चेतना ने भी इसे रहस्यपूर्ण बनाया हैं। उनकी गहराई में जाना साधक के लिए अनिवार्य है।

२३ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर प्रशिक्षण प्रविधि

शिथिलीकरण से शरीर प्रशिक्षित होता है। वह मन के निर्देशों का पालन करता है। निर्देश देते समय सुखासन की मुद्रा, मेरुदण्ड सीधा, नेत्र मुंदे हुए अथवा अर्द्ध खुले हुए, मौन और दो-तीन क्षण के लिए निर्विचार मनोदशा। इस अवस्था में शिथिल होने के निर्देश को शरीर शीघ्र ग्रहण कर लेता है।

शिथिलीकरण के परिणाम—

१. मस्तिष्क को विश्राम

२. नाड़ी संस्थान को विश्राम

३. प्रत्येक कोशिका को विश्राम

४. सूक्ष्म शरीर का स्थूल शरीर से बाहर निस्सरण

प्रवृत्ति और प्रवृत्तिजनित तनाव की अवस्था में होने वाली शारीरिक और मानसिक शक्ति का व्यय शिथिलीकरण की अवस्था में अपने आप रुक जाता है।

२४ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विकास की पहली भूमिका

मनुष्य के जीवन में कामवासना, लोलुपता आदि वृत्तियां होती हैं। वहां वैराग्य, समाधि और अन्तर्दृष्टि की शक्तियां भी होती हैं।

जो व्यक्ति वृत्तियों को संयत करना और आन्तरिक शक्ति का विकास करना चाहता है उसे चैतन्यकेन्द्रों की शरीर में अवस्थिति और उनके कार्य का बोध अवश्य करना चाहिए। इनका अन्तःस्रावी ग्रन्थितन्त्र एवं मस्तिष्क के विभिन्न परतों और अवयवों के सन्दर्भ में प्रस्तुतीकरण बहुत उपयोगी होगा।

२५ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र-(१)

आत्मा और चैतन्य पूरे शरीर में व्याप्त है। पूरा नाड़ीतन्त्र चैतन्य से ओतप्रोत है। फिर भी शरीर के कुछ भाग ऐसे हैं जहां चैतन्य विरल रूप में व्याप्त हैं और कुछ अवयव ऐसे हैं जहां चैतन्य सघन रूप में व्याप्त है।

जहां चैतन्य सघन होता है वह स्थान आयुर्वेद की भाषा में मर्मस्थान और हठयोग की भाषा में चक्र कहलाता है। प्रेक्षाध्यान की पद्धति में उसे चैतन्यकेन्द्र कहा जाता है।

२६ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र-(२)

हमारे शरीर में अनेक चैतन्यकेन्द्र हैं। प्रेक्षाध्यान की पद्धति में तेरह चैतन्यकेन्द्रों पर जप और ध्यान के प्रयोग किये जाते हैं. वे इस प्रकार हैं—

१. शक्ति केन्द्र
२. स्वास्थ्य केन्द्र
३. तैजस केन्द्र
४. आनन्द केन्द्र
५. विशुद्धि केन्द्र
६. ब्रह्म केन्द्र
७. प्राण केन्द्र
८. अप्रमाद केन्द्र
९. चाक्षुष केन्द्र
१०. दर्शन केन्द्र
११. ज्योति केन्द्र
१२. शांति केन्द्र
१३. ज्ञान केन्द्र

२७ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र : अवस्थिति

शरीर में अनेक चैतन्यकेन्द्र हैं। एड़ी से लेकर चोटी तक उनका जाल बिछा हुआ है। उनमें कुछ विशिष्ट और कुछ साधारण हैं। शक्तिकेन्द्र से ऊपर के सारे चैतन्यकेन्द्र शुभ हैं। शक्तिकेन्द्र से नीचे एड़ी तक होने वाले चैतन्यकेन्द्र अशुभ हैं। उनका संबंध मौलिक मनोवृत्तियों से है।

शक्तिकेन्द्र मध्यवर्ती है। वह मनुष्य के विकास का पहला सोपान है और पशु के विकास का अन्तिम सोपान।

२८ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्तिकेन्द्र-(१)

मनुष्य के शरीर में शक्ति अथवा ऊर्जा के तीन स्थान हैं—

१. गुदा

२. नाभि

३. कण्ठ

इनमें गुदा का स्थान पहला ऊर्जा केन्द्र है। हठयोग में इसे मूलाधार चक्र कहा जाता है। प्रेक्षाध्यान की पद्धति में इसका नाम शक्तिकेन्द्र है। यह मनुष्य के विकास-क्रम का पहला सोपान है। पशु के विकास-क्रम का अन्तिम सोपान है।

शक्तिकेन्द्र से लेकर एड़ी तक जो चैतन्य-केन्द्र हैं, उनका संबंध मौलिक मनोवृत्तियों के साथ है।

२९ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्तिकेन्द्र-(२)

प्राणविद्या के अनुसार शक्ति केन्द्र (मूलाधार) विद्युत उत्पादन का केन्द्र है। शरीर की सारी प्रवृत्तियां विद्युत के द्वारा संचालित होती हैं। शरीरशास्त्र के अनुसार हर कोशिका के पास अपना विद्युत-गृह (Power house) है।

विद्युत उत्पादन की क्रिया तैजस शरीर के द्वारा होती है। वैज्ञानिक विकास का आधार विद्युत हैं वैसे ही प्राण शक्ति के विकास का मूल आधार तैजस शरीर है। वह हमारे स्थूल शरीर में अवस्थित है। उसी के द्वारा शरीर की क्रिया संचालित होती है।

३० मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति केन्द्र-(३)

हठयोग में तीन नाड़ियां प्रमुख हैं—इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। मूलाधार पिंगला का उद्गम स्थल है। इसका कार्यक्षेत्र दर्शन केन्द्र (आज्ञा चक्र) है। प्राण शक्ति को बढ़ाने के लिए इसका उपयोग आवश्यक है।

यह पृथ्वी तत्त्व का आधार है। पृथ्वी तत्त्व का रंग पीला है। शक्ति केन्द्र पर पीले रंग का ध्यान करना बहुत उपयोगी है। इसके जागृत होने पर वाक्-सिद्धि की साधना सुलभ हो जाती है। आरोग्य के लिए इसका जागरण बहुत महत्त्वपूर्ण है।

३१ मार्च
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति केन्द्र के जागरण की प्रक्रिया-(१)

शक्ति केन्द्र को जागृत करने के लिए उस पर ध्यान करना जरूरी है। यदि दीर्घश्वास के साथ ध्यान का प्रयोग किया जाए तो वह अधिक सफल हो सकता है।

मूलबंध, अश्विनी मुद्रा और शक्तिचालिनी मुद्रा—ये तीनों शक्ति को जागृत करने में बहुत उपयोगी हैं।

शक्ति केन्द्र के जागृत होने का एक महत्त्वपूर्ण लाभ है आरोग्य। इसके दो लाभ और माने गए हैं—वाक्सिद्धि और कवित्व।

०१ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति केन्द्र के जागरण की प्रक्रिया-(२)

ऊर्जा का दूसरा महत्त्वपूर्ण केन्द्र है तैजस केन्द्र।

मनुष्य का पूरा शरीर ऊर्जा के द्वारा संचालित होता है। तेजस्विता, दीप्ति, पाचन और संकल्प-शक्ति—इन सबका तैजस केन्द्र से बहुत गहरा संबंध है। इससे आरोग्य का संबंध भी कम नहीं है। इसके जागृत होने पर व्यक्ति स्वयं स्फूर्त और प्राणवान बन जाता है।

०२ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति केन्द्र के जागरण की प्रक्रिया-(३)

विशुद्धि केन्द्र शक्ति का तीसरा स्रोत है। यह थायराइड ग्लैण्ड का संवादी केन्द्र है। इसी स्थान पर चयापचय की क्रिया होती है। इसलिए यह जीवनी शक्ति का मुख्य स्रोत बन जाता है।

विशुद्धि केन्द्र की जागृति का शारीरिक लाभ है—वृद्धत्व को रोकना। आध्यात्मिक लाभ है—वृत्तियों का परिष्कार। वैराग्य और पदार्थ के प्रति होने वाली अनासक्ति के विकास में इसका महत्त्वपूर्ण योग है। विशुद्धि केन्द्र को जागृत करने के लिए अधिक साधना की आवश्यकता है।

०३ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वास्थ्य केन्द्र

यह मेरुदण्ड के निचले छोर पर है। हठयोग में इसका नाम स्वाधिष्ठान चक्र है। यह मनुष्य के अचेतन मन को नियन्त्रित करता है। मनुष्य के मस्तिष्क में एक बहुत पुरानी पाशविक (Animal brain) परत है। उसमें कामवासना, भय, घृणा आदि के संस्कार अर्जित रहते हैं। इस केन्द्र का मानसिक स्वास्थ्य के साथ भी गहरा संबंध रहता है। अपरिष्कृत स्वास्थ्य केन्द्र, मानसिक और भावात्मक समस्या उत्पन्न करता है। साधना के द्वारा परिष्कृत कर देने पर यह आरोग्य का और विशेषतः मानसिक आरोग्य व भक्ति का बहुत बड़ा साधन बनता है।

०४ अप्रैल
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैजस केन्द्र

यह नाभि और उसके परिपार्श्व में स्थित है। हठयोग की भाषा में इसे मणिपुर चक्र कहते हैं।

शक्ति केन्द्र, स्वास्थ्य केन्द्र और तैजस केन्द्र ये तीनों चैतन्य केन्द्र स्वतः सक्रिय हैं। स्वास्थ्य केन्द्र कामग्रन्थि (गोनाड्स) का प्रभाव क्षेत्र है। तैजस केन्द्र एड्रीनल ग्लैण्ड का प्रभाव क्षेत्र है। साधक के लिए नीचे के तीनों केन्द्रों का परिष्कार करना जरूरी है।

०५ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आनन्द केन्द्र

हठयोग में इसे अनाहत चक्र कहते हैं। आध्यात्मिक विकास का वास्तविक क्रम इसी केन्द्र से शुरू होता है। नीचे के तीनों केन्द्र परिष्कृत होने पर साधना में सहायक बनते हैं। शक्ति केन्द्र ऊर्जा का केन्द्र है। स्वास्थ्य केन्द्र वृत्तियों को उत्तेजित करने वाली मस्तिष्कीय चेतना का केन्द्र है। तैजस केन्द्र प्राण के उत्पादन का केन्द्र है। सामान्य सामाजिक जीवन की यात्रा के लिए ये तीनों कार्यकारी हैं। चेतना के उदात्तीकरण का आरम्भ बिन्दु आनन्द केन्द्र है।

०६ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशुद्धि केन्द्र

इसका स्थान कण्ठ का मध्य भाग है। हठयोग में भी इसकी संज्ञा विशुद्धि चक्र है। तीन शक्ति केन्द्रों में यह सर्वोपरि है।

वृत्तियों के परिष्कार का यह बहुत बड़ा माध्यम है। इसे बुढ़ापे को रोकने वाला माना जाता है। शरीरशास्त्रीय दृष्टि से चयापचय की क्रिया का संबंध कण्ठमणि (थायरायड ग्लैण्ड) से है। वह विशुद्धि केन्द्र के परिपार्श्व में है। चयापचय की क्रिया का संतुलन वृद्धावस्था को रोकने में सहायक बन सकता है।

०७ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्म केन्द्र

ब्रह्म केन्द्र का स्थान जीभ है। तंत्र साधना के अनुसार यह ज्ञानेन्द्रिय है। इसका कर्मेन्द्रिय जननेन्द्रिय है। जीभ का असंयम कामवासना को उद्दीप्त करता है। इसका संयम ब्रह्मकेन्द्र की साधना में सहयोगी बनता है।

हठयोग में जीभ और तालु के मिलन को खेचरी मुद्रा कहा जाता है। वह हठयोग की एक विशिष्ट साधना है। साधारण आदमी खेचरी मुद्रा की साधना नहीं कर सकता किन्तु जीभ को उलटकर तालु की ओर ले जा सकता है। यह एकाग्रता और वृत्ति परिष्कार के लिए बहुत मूल्यवान प्रयोग है।

०८ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राण केन्द्र-(१)

योग के प्राचीन साहित्य में नासाग्र पर ध्यान करने का बार-बार उल्लेख मिलता है। यह प्राण का मुख्य केन्द्र है। इस पर जैसे ही मन को टिकाने का अभ्यास किया जाता है वैसे ही मूलबंध हो जाता है और मूल नाड़ी तन जाती है।

प्राण नियन्त्रण के लिए इस पर ध्यान करना बहुत महत्त्वपूर्ण है। चंचल मन वाले व्यक्ति इस पर ध्यान करके एकाग्रता को बढ़ा सकते हैं। निर्विकल्प और निर्विचार ध्यान की साधना के लिए प्राणकेन्द्र बहुत ही उपयोगी है।

०९ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राण केन्द्र-(२)

नाक श्वास के भीतर जाने का मुख्य द्वार है। दोनों नथुनों से श्वास भीतर जाता है और बाहर आता है। श्वास प्रेक्षा में श्वास के भीतर जाने और बाहर आने को देखा जाता है।

प्राण केन्द्र नाक का अग्रभाग है या दोनों नथुने हैं अथवा श्वास का संधिस्थल है? वास्तव में जो श्वास का संधिस्थल है वह प्राण केन्द्र है। नासाग्र शब्द के द्वारा उस पूरे प्रदेश का संबोध होता है। यह पूरा प्रदेश प्राण केन्द्र का प्रभाव क्षेत्र है। ध्यान का प्रयोग मूल केन्द्र और उसके प्रभाव क्षेत्र—दोनों पर करना चाहिए।

१० अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राण केन्द्र-(३)

नाक घ्राणेन्द्रिय है। इसके द्वारा गंध का संवेदन होता है। मस्तिष्क का एक भाग जो गंध की पहचान करता है, घ्राण-मस्तिष्क कहलाता है। इसमें भय, क्रोध, आक्रमण, कामेच्छा आदि के भी केन्द्र अवस्थित हैं। घ्राणेन्द्रिय से उनके सम्बन्ध की संभावना की जा सकती है।

प्राण केन्द्र पर ध्यान करने का अर्थ है वृत्तियों का परिष्कार। इससे नासाग्र-ध्यान के प्राचीन सूत्र का मूल्य समझने में सुविधा होगी।

११ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्रमाद केन्द्र

मनुष्य शरीर की रचना में कान का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा शब्दों का ग्रहण होता है। बाह्य जगत से हमारा सम्पर्क स्थापित होता है। यह प्रत्यक्ष है। यह मर्मस्थान है, यह इसका परोक्ष स्वरूप है।

कान पर ध्यान के प्रयोग कराए गए। उनसे शराब आदि मादक वस्तुओं के सेवन की आदतें बदल गईं। इस प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर कान के मर्मस्थान का नाम अप्रमाद केन्द्र रखा गया।

१२ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाक्षुष केन्द्र

बाह्य जगत से सम्पर्क स्थापित करने का एक प्रमुख साधन है चक्षु। तार्किक विद्वानों ने चक्षु के विज्ञान को प्रत्यक्ष विज्ञान माना है। मनुष्य विश्वास के साथ कहता है यह मेरे आंखों देखी बात है। ध्यान की मुद्रा में चक्षु की मुद्रा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सामान्यतया ध्यान की स्थिति में आंख मूंद ली जाती है।

ध्यान के समय इस बात पर भी विचार करना आवश्यक है कि चक्षु पर भी ध्यान किया जा सकता है। एकाग्रता और अन्तश्चक्षु के उद्घाटन के लिए वह बहुत उपयोगी है।

१३ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दर्शन केन्द्र-(१)

इसका स्थान दोनों भौहों तथा दोनों आंखों के मध्य का भाग है। हठयोग में इसे आज्ञाचक्र कहते हैं। यह अन्तश्चक्षु के जागरण का मर्मस्थान है। इसकी साधना से प्रज्ञा और तीसरे नेत्र का जागरण होता है। योग साधना में इसका स्थान सर्वोपरि है। यह पीयूष ग्रन्थि (Pituitary Gland) का स्थान है जो मास्टर ग्लैण्ड (Master Gland) के रूप में जानी जाती है। संभवतः दर्शन केन्द्र का निम्नवर्ती सभी केन्द्रों पर नियंत्रण है।

१४ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दर्शन केन्द्र-(२)

पीयूष ग्रन्थि का गोनाडोट्रॉफिन हार्मोन कामग्रन्थि (Gonads) को प्रभावित करता है तब वासना जागती है। उसको नियंत्रित किया जाए तो काम वासना अपने आप शांत हो जाती है। उस स्राव का नियंत्रण दर्शन केन्द्र पर ध्यान करने से होता है।

दर्शन केन्द्र में स्थूल और सूक्ष्म चेतना का संगम होता है। जागृत अवस्था में स्थूल और सूक्ष्म चेतना का स्थान भ्रूमध्य में आंखों के पीछे की ओर है। अर्द्धचेतन अवस्था में कण्ठ के पास है और गहरी नींद में नाभि में है।

१५ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्योति केन्द्र

ललाट भाव क्षेत्र (Emotional area) है। क्रोध का आवेश यहां जन्म लेता है। इसके मध्य भाग में एक मर्मस्थान है। प्रेक्षाध्यान की पद्धति में उसका नाम ज्योति केन्द्र रखा गया है। यह पाइनिअल ग्लैण्ड का प्रभाव क्षेत्र है। ध्यान के द्वारा इसको जागृत करने पर क्रोध उपशान्त होता है। भावनात्मक आवेश संतुलित होते हैं। इस केन्द्र पर किया जाने वाला ध्यान मानसिक एकाग्रता व मानसिक संतुलन का भी बहुत बड़ा निमित्त बनता है।

१६ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शांति केन्द्र

अवचेतक (Hypothalamus) मस्तिष्क भाव की उत्पत्ति का केन्द्र है। एक प्राचीन अवधारणा है कि भाव हृदय में पैदा होते हैं। सामान्यतः हृदय रक्त को पम्पिंग करने वाला है। उस पर भाव का आघात होता है। किन्तु भाव उत्पत्ति का केन्द्र वह नहीं है।

आयुर्वेद में दो हृदय माने गए हैं। एक हृदय पम्पिंग करने वाला है और दूसरा हृदय मस्तिष्क में है। उसकी पहचान हाइपोथेलेमस से की जा सकती है। यह भावतन्त्र का उत्पत्ति केन्द्र है।

१७ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानकेन्द्र

ज्ञानकेन्द्र चोटी के आसपास का भाग है। हठयोग में इसकी संज्ञा सहस्रार-चक्र है। यह ज्ञान विकास का मुख्य केन्द्र है। यह स्थान की दृष्टि से सर्वोपरि है और चैतन्य विकास की दृष्टि से इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस स्थान से ज्ञान की सहस्र रश्मियां प्रस्फुटित होती हैं। इसीलिए इसका नाम सहस्रार चक्षु रखा गया है। इसकी साधना से समाधि सहज सिद्ध हो जाती है। यह निर्विकल्प समाधि की साधना का प्रमुख बिन्दु है।

१८ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्य केन्द्र और रंग

अध्यात्म-विद्या में चैतन्य केन्द्रों के रंगों का भी निर्देश मिलता है। चैतन्य केन्द्रों पर रंगों का ध्यान किया जाए तो उनकी क्रिया में भी परिवर्तन आता है। रंगों का निर्देश—

शक्ति केन्द्र	पीला
स्वास्थ्य केन्द्र	नारंगी
तैजस केन्द्र	लाल
आनन्द केन्द्र	वायलेट
विशुद्धि केन्द्र	इंडिगो (बैंगनी)
दर्शन केन्द्र	नीला
ज्योति केन्द्र	जामुनी (नीला)
ज्ञान केन्द्र	हरा, आसमानी

१९ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर का सौरमण्डल

अध्यात्म ज्योतिष्क में चक्रों अथवा चैतन्य केन्द्रों के साथ सौरमण्डल की योजना की गई है। इससे ग्रन्थियों के साथ सौरमंडल के संबंध को भी जाना जा सकता है। सौरमण्डल की योजना—

चैतन्य केन्द्र	ग्रह
शक्ति केन्द्र	बुध, राहु, केतु
स्वास्थ्य केन्द्र	शुक्र
तैजस केन्द्र	रवि
आनन्द केन्द्र	मंगल
विशुद्धि केन्द्र	चन्द्र
दर्शन केन्द्र	गुरु
ज्ञान केन्द्र	शनि

२० अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्य केन्द्र और ग्रन्थितन्त्र-(१)

आगम साहित्य और आयुर्वेद में मर्म का विशद विवेचन हुआ है। हठयोग मे उसका वर्णन चक्र सिद्धान्त के आधार पर किया गया है। आयुर्विज्ञान (Medical science) में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों, उनके स्रावों और उनके प्रभावों का अध्ययन किए बिना चक्र सिद्धान्त की पूरी अवधारणा स्पष्ट नहीं होती। अतः ध्यान करने वाले व्यक्ति को ग्रन्थितन्त्र के बारे में जानना बहुत आवश्यक है।

२१ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्य केन्द्र और ग्रन्थितन्त्र-(२)

चैतन्य केन्द्र के अध्ययन के साथ ग्रंथितन्त्र का अध्ययन करने पर अनेक नए रहस्य प्रकट होते हैं। यह सहज ही स्वीकार करना चाहिए कि वर्तमान शरीर-शास्त्रियों ने ग्रन्थियों, उनके स्रावों और उनके प्रभावों का जितना तलस्पर्शी अध्ययन किया है, उतना विशद अध्ययन चैतन्य केन्द्रों अथवा चक्रों के बारे में उपलब्ध नहीं है। योग का शरीरशास्त्र, आयुर्वेद तथा आयुर्विज्ञान—इन तीनों विधाओं में मर्मस्थानों के विषय में जो निरूपण है उसका तुलनात्मक अध्ययन नई दिशा का उद्घाटन करनेवाला हो सकता है।

२२ अप्रैल

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्त धातु और चैतन्य केन्द्र

शरीर सात धातुओं से निर्मित है। उनके साथ चैतन्य केन्द्रों का ध्यान किया जाता है। यदि वर्ण और धातुओं के साथ चैतन्य केन्द्रों पर ध्यान किया जाए तो वह अधिक प्रभावी बनता है। विधि इस प्रकार है—

	चैतन्य केन्द्र	धातु	वर्ण
१.	शक्ति केन्द्र	अस्थि	व स
२.	स्वास्थ्य केन्द्र	मेद	ब ल
३.	तैजस केन्द्र	मांस	ड़ फ
४.	आनन्द केन्द्र	त्वग्	अं अः
५.	विशुद्धि केन्द्र	असृक्	क ठ
६.	दर्शन केन्द्र	मज्जा	ह क्ष
7.	दर्शन केन्द्र	शुक्र	हुं हां

२३ अप्रैल
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थियों के स्राव का संतुलन

आसन, रंग ध्यान, प्रेक्षा और स्वतः सूचना इनके द्वारा ग्रन्थि-स्राव को संतुलित किया जाता है।

इड़ा, पिंगला नाड़ियों में प्राण प्रवाह संतुलित कर अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव और मस्तिष्क के रासायनिक स्राव नियन्त्रित किए जा सकते हैं।

शशांकासन का आधा घंटा या एक घंटा तक अभ्यास करने से एड्रीनल ग्रन्थि पर नियन्त्रण होता है।

सुप्तवज्रासन से स्वास्थ्य केन्द्र और भुजंगासन से तैजस केन्द्र पर नियन्त्रण होता है।

सर्वाङ्गासन से विशुद्धि केन्द्र जागृत होता है।

२४ अप्रैल

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हॉर्मोन्स का संतुलन

एड्रीनलाइन के स्राव से मन व शरीर को हठात् अधिक शक्ति प्राप्त होती है। इसके अधिक स्राव से तनाव व निराशा उत्पन्न होती है। थायराइड ग्रन्थि से स्त्रवित होने वाला थायरॉक्सिन चयापचय की दर को नियन्त्रित करता है। इसका अतिस्राव शरीर एवं मन में तनाव व उत्तेजना पैदा करता है। इसका कम स्राव शरीर में थकान एवं मन में आलस्य पैदा करता है। अन्य हॉर्मोन्स हमारे प्रजनन संबंधी अंगों को नियंत्रित करते हैं तथा मेल एवं फीमेल सम्बन्धी हॉर्मोन्स पुरुषत्व एवं स्त्रीत्व प्रदान करते हैं। इनकी कमी-बेशी मनुष्य को नपुंसक या कामुक बना देती है।

वात, पित्त और कफ का वैषम्य रोग और उनका साम्य आरोग्य है। इस आयुर्वेदीय सिद्धान्त के आधार पर आयुर्विज्ञान का यह सिद्धान्त स्थापित किया जा सकता है कि हॉर्मोन्स के स्राव का असंतुलन रोग और उनका संतुलन आरोग्य है।

२५ अप्रैल
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सौरमंडल और ग्रन्थितन्त्र

ग्रहों का प्रभाव भौतिक जगत के पदार्थ अणुओं पर भी पड़ता है और चेतन जीवाणुओं पर भी। इसी प्रकार हमारे शरीर के क्रिया-कलाप पर ही नहीं, भाव संस्थान पर भी ये ग्रन्थियां प्रभाव डालती हैं।

ग्रह	ग्रन्थि (Gland)
सूर्य	पाइनियल
चन्द्र	पिट्युइटरी
बृहस्पति	एड्रीनल
बुध	थाइराइड
शुक्र	थायमस
मंगल	पेराथाइराइड

सौरमंडल के ग्रहों और शरीरगत हॉर्मोन की प्रकृति की तुलना करते हुए यह संगति बिठाई गई है।

२६ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रासायनिक नियन्त्रण प्रणाली

हमारे शरीर में दो प्रकार की नियंत्रण प्रणालियां हैं। पहली रासायनिक नियंत्रण प्रणाली, जो स्वतःचालित है एवं दूसरी विद्युत नियंत्रण प्रणाली है जिसमें हम अपनी बुद्धि का थोड़ा-बहुत उपयोग कर सकते हैं। रासायनिक नियंत्रण प्रणाली का संचालन अंतःस्रावी ग्रन्थियों द्वारा होता है। इसका स्राव सीधा रक्त में मिलकर शरीर को प्रभावित करता है। ये स्राव शरीर को संतुलित करते हैं। परन्तु यदा-कदा ये असंतुलित भी हो जाते हैं जिससे शरीर में रोग उत्पन्न होते हैं। ध्यान के प्रयोगों द्वारा इन स्रावों को संतुलित किया जा सकता है।

२७ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नियन्त्रण स्वतःचालित क्रिया पर

क्रिया के दो प्रकार हैं—

१. प्रयोगजनित-इच्छाचालित (Voluntary)

२. विस्रसाजनित-स्वतःचालित (Involuntary)

साधना करने वाला प्रारम्भ में इच्छाचालित क्रिया पर नियन्त्रण करता है। स्वतःचालित क्रिया पर उसका नियन्त्रण नहीं होता। साधना की उच्च भूमिका वह है जहां साधक का स्वतःचालित क्रिया पर नियन्त्रण हो जाता है।

साधक में धैर्य की जरूरत है। वह सीधा स्वतःचालित क्रिया पर नियन्त्रण करने की बात न सोचे।

२८ अप्रैल
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या

लेश्या के छः प्रकार हैं—

१. कृष्ण लेश्या २. नील लेश्या ३. कापोत लेश्या

४. तेजो लेश्या ५. पद्म लेश्या ६. शुक्ल लेश्या

ये प्रत्येक प्राणी में होती हैं पर इनमें कोई लेश्या प्रधान होती है, कोई गौण।

साधना का प्रयोग लेश्याजनित स्वभाव के आधार पर निर्धारित करना चाहिए।

लेश्या	स्वभाव	साधना
१. कृष्ण लेश्या प्रधान	आर्त्त	भजन (अन्यथा नींद)
२. नील लेश्या प्रधान	प्रमत्त (अजगर की भांति)	वाचिक जप
३. कापोत लेश्या प्रधान	चंचल (बंदर की भांति)	वाचिक जप
४. तेजो लेश्या प्रधान	अचपल	एकाग्रता ध्यान
५. पद्म लेश्या प्रधान	प्रशान्त	निर्विकल्प ध्यान
६. शुक्ल लेश्या प्रधान	उपशान्त	दीर्घकालीन निर्विकल्प ध्यान

२६ अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या ध्यान-(१)

मनुष्य का शरीर, हमारा मन और हमारी वाणी—ये सब पौद्गलिक हैं। रंग पुद्गल का एक गुण है। अनुकूल पुद्गल का योग मनुष्य की पौद्गलिक शक्ति को बढ़ाता है। प्रतिकूल पुद्गल का योग उसकी शक्ति को घटाता है।

रंग विज्ञान में रंगों के अनेक गुण बतलाए गए हैं। अलग-अलग रंग और उनकी अलग-अलग प्रतिक्रियाएं हैं। इष्ट चिन्तन के द्वारा इष्ट रंग की पूर्ति होती है, अनिष्ट चिन्तन के द्वारा अनिष्ट रंग की पूर्ति होती है। इसलिए अनिष्ट चिन्तन का वर्जन स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

३० अप्रैल
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या ध्यान-(२)

मनोविज्ञान और रंगविज्ञान के अनुसार रंग व्यक्ति के अवचेतन मस्तिष्क और सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

रंग की विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा ग्रंथितंत्र का नियमन करती है। इसके द्वारा श्वास की गति प्रभावित होती है और रक्त शुद्धि होती है। मानसिक कमजोरी, उदासी को दूर करने और शांति तथा शक्ति विकास के संवर्धन में भी इनकी सक्रिय भूमिका है इसलिए प्रत्येक रंग के गुण-धर्म का अध्ययन बहुत जरूरी है।

०१ मई
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐
卐卐

लेश्या ध्यान-(३)

लेश्या का सम्बन्ध रंग के साथ है। रंग हमारे शारीरिक तंत्र को प्रभावित करता है।

१. लाल रंग एड्रीनल ग्लैण्ड को उत्तेजित करता है। शरीर में स्फूर्ति व सक्रियता को बढ़ाता है। रक्त संबंधी सभी रोगों पर प्रभाव डालता है।

२. नारंगी रंग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाता है। फेफड़ा, पेन्क्रियाज और प्लीहा को सशक्त बनाता है। केल्शियम की अभिवृद्धि करता है। नाड़ी की गति बढ़ती है, रक्तचाप सामान्य रहता है, फेफड़ों एवं छाती से संबंधित रोगों के लिए उपयोगी होता है।

३. पीला रंग मांसपेशियों की मजबूती और पाचन संस्थान को स्वस्थ रखने में सहायक है। छोटी आंत और बड़ी आंत संबंधी बीमारियों में प्रभावकारी है।

०२ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या ध्यान-(४)

४. हरा रंग हृदय और रक्तसंचार तंत्र को प्राणवान बनाता है। मानसिक तनाव को कम करता है। इसके अधिक प्रयोग से पिट्युइटरी और मांसपेशियों के ऊतकों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

५. नीला रंग चयापचय की वृद्धि करता है। रक्तकणों का परिशोधन करता है।

६. बैंगनी रंग शरीर में पोटेशियम का संतुलन करता है। यह ट्यूमर के विकास को अवरुद्ध करता है।

७. गुलाबी रंग भावात्मक विकास में महत्त्व-पूर्ण भूमिका निभाता है।

८. सफेद रंग सभी बीमारियों को दूर करने में निमित्त बनता है। यह असीम शक्तिदायक है। जब रोग का सही निदान न हो तब सफेद रंग का ध्यान विशेषतः लाभप्रद होता है।

०३ मई

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या ध्यान-(८)

विशुद्धि केन्द्र पर हरे रंग का ध्यान करने से विजातीय तत्त्व दूर होते हैं। इससे अनासक्ति का विकास होता है और मानसिक शांति बढ़ती है।

बैंगनी रंग के ध्यान से आध्यात्मिकता का विकास होता है। तेजोलेश्या, पद्मलेश्या और शुक्ल लेश्या के रंग आध्यात्मिक रंग है। इन तीनों लेश्याओं का क्रमशः दर्शनकेन्द्र, ज्योतिकेन्द्र और ज्ञानकेन्द्र पर ध्यान करने से अध्यात्म का विकास होता है।

०४ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या ध्यान-(६)

लेश्या ध्यान के द्वारा शरीर में रंगों का संतुलन किया जा सकता है। रंग की कमी-पूर्ति के लिए लेश्या ध्यान और उसी रंग के श्वास का प्रयोग महत्त्वपूर्ण है।

श्वेत रंग की कमी	:	पवित्रता का अभाव
लाल रंग की कमी	:	उत्साह, स्फूर्ति, सक्रियता का अभाव
पीत रंग की कमी	:	बौद्धिक विकास का अभाव
नील रंग की कमी	:	चंचलता, क्रोध की अधिकता
कृष्ण रंग की कमी	:	नींद और आलस्य

०५ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवयव, श्वास और रंग

मनुष्य शरीर के अवयवों का रंग अलग-अलग होता है। इसलिए शारीरिक अवयवों की पुष्टि के लिए अलग-अलग रंगों का श्वास लेना उपयोगी होता है।

अवयवों के रंग इस प्रकार है—

अवयव	रंग
सिर और गर्दन	नीला
गला	गहरा नीला
छाती और फेफड़े	बैंगनी
आंत, गुर्दा	हरा
मूत्राशय	हरा
त्वचा	हरा
आमाशय	नारंगी
जिगर और तिल्ली	पीला
धड़, बाजू, जननेन्द्रिय	लाल

०६ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रंगपूर्ति की प्रक्रिया

श्वास में सब रंग हैं। श्वास के साथ ये सब हमारे भीतर जाते हैं और हमें प्रभावित भी करते हैं। जब हम आकाशमण्डल में फैले हुए रंग के परमाणुओं के ग्रहण का संकल्प करते हैं तब श्वास के रंगों की शक्ति अधिक बढ़ जाती है। इसलिए जिस रंग का श्वास लेना हो, उस रंग के परमाणुओं के ग्रहण का संकल्प करें और उस संकल्प के साथ श्वास लें। इससे अभिलषित रंग की पूर्ति होगी और उस रंग की कमी से होने वाली समस्या का समाधान होगा।

०७ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभामण्डल-(१)

वर्तमान युग में आभामण्डल शब्द बहुत प्रसिद्ध हो चुका है। जैन साधना पद्धति में आभामण्डल का प्रतिनिधि शब्द है लेश्या।

हमारी सूक्ष्म चेतना, सूक्ष्म शरीर के स्तर से निकलने वाली भाव रश्मियों और भाव तरंगों का नाम है लेश्या।

ध्यान साधना का प्रारम्भ करने वाले व्यक्ति को आभामण्डल के बारे में अवश्य जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

०८ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभामण्डल-(२)

भावधारा और आभामण्डल में बहुत गहरा संबंध है। आभामण्डल को देखकर भावधारा को जाना जा सकता है।

आभामण्डल सूक्ष्म परमाणुओं की संरचना है। वह दो प्रकार का होता है—

१. मन से निर्मित

२. भावधारा से निर्मित

स्थूल शरीर के भीतर एक सूक्ष्म शरीर है, उसका नाम है तैजस शरीर। इस तैजस शरीर के परमाणु आभामण्डल का निर्माण करते हैं।

०६ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव

भाव के चार प्रकार बतलाए गए हैं—

१. कर्दम उदक के समान

२. खञ्जन उदक के समान

३. बालुका उदक के समान

४. शैल उदक के समान

प्रथम प्रकार का भाव मलिनतर, दूसरे प्रकार का भाव मलिन, तीसरे प्रकार का भाव निर्मल और चौथे प्रकार का भाव निर्मलतर होता है।

प्रथम प्रकार के भाव में अनुप्रविष्ट जीव मरकर नरक में पैदा होता है।

दूसरे प्रकार के भाव में अनुप्रविष्ट जीव मरकर तिर्यञ्च में पैदा होता है।

तीसरे प्रकार के भाव में अनुप्रविष्ट जीव मरकर मनुष्य बनता है।

चौथे प्रकार के भाव में अनुप्रविष्ट जीव मरकर देव बनता है।

१० मई
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव द्वारा परिवर्तन

भावना के द्वारा शारीरिक परिवर्तन होते हैं। उसके द्वारा आदतों का परिवर्तन भी किया जा सकता है। हृदय की धड़कन को कम करने के लिए हल्का-फुल्का होने की भावना करो, वह कम हो जायेगी।

हृदय की धड़कन को बढ़ाने के लिए दौड़ने की भावना करो, वह बढ़ जाएगी।

भावना के द्वारा अनेक परिवर्तन किए जा सकते हैं। अपने रंग-रूप को बदला जा सकता है। भद्दा सुन्दर बन सकता है। अच्छे भाव की पुनरावृत्ति से सौन्दर्य बढ़ जाता है।

११ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्ति परिवर्तन

वृत्ति को बदलने के लिए सबसे पहले जरूरी है उसके उद्‌गम-स्थल की खोज।

१. वृत्ति के उभार को जागरूकता से देखें।

२. वृत्ति के उद्‌गम स्थल पर ध्यान केन्द्रित करे।

३. वृत्ति का संबंध केवल मस्तिष्क से नहीं, ग्रन्थितंत्र, चैतन्य केन्द्रों से भी है।

वृत्ति परिवर्तन के लिए विशुद्धि केन्द्र और आनन्द केन्द्र पर ध्यान करना बहुत आवश्यक है।

सम्मोहन-वृत्ति परिवर्तन के लिए सुझाव दो। सुझाव देते-देते सम्मोहन की अवस्था में चले जाओ। धीरे-धीरे वृत्ति में परिवर्तन हो जाएगा।

१२ मई

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्ति का रूपान्तरण

वृत्ति को बदलना सहज-सरल नहीं है। यदि उसका रूपान्तरण न हो तो धर्म करने का अर्थ भी सीमित हो जाता है। इसलिए धर्म के मनीषियों ने वृत्ति रूपान्तरण के उपायों पर विचार किया। उन उपायों में प्रतिपक्ष भावना और प्रतिपक्ष भावना के चित्र का निर्माण बहुत महत्त्वपूर्ण प्रयोग हैं। क्रोध की वृत्ति का रूपान्तरण करने के लिए क्षमा की भावना एक उपाय है। क्षमा के चित्र का निर्माण करना अधिक शक्तिशाली उपाय है। इन उपायों का आलम्बन लेकर वृत्ति रूपान्तरण के कठिन कार्य को सुगम बनाया जा सकता है।

१३ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन की प्रक्रिया-(१)

ध्यान परावर्तन की संरचना (Feed back machanism) की पद्धति है। उसके द्वारा सूक्ष्म शरीर को प्रभावित करते हैं। उसके रसायन और विद्युत प्रवाह बदलते हैं।

सूक्ष्म शरीर प्रतिक्रिया स्वरूप स्थूल शरीर के रसायन और विद्युत प्रवाह को बदलता है। फलस्वरूप मनुष्य के विचार, आचार और व्यवहार में परिवर्तन होता है।

Feed back machanism के तत्त्व—

१. श्वास-दर्शन

२. प्राण-दर्शन

३. शरीर-दर्शन—रसायन और प्रकम्पन का दर्शन

४. चैतन्य केन्द्र दर्शन

५. रंग-दर्शन

१४ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन की प्रक्रिया-(२)

परिवर्तन दृश्य होता है। उसकी प्रक्रिया अदृश्य होती है। व्यवहार बदल गया है—इसका हमें पता चलता है। कैसे बदला—इसका हमें पता नहीं चलता।

एक आदमी अपने व्यवहार को बदलना चाहता है पर वह बदल नहीं सकता।

एक आदमी व्यवहार को बदलने का उपदेश सुनता है फिर भी नहीं बदलता।

बहुत बार प्रश्न होता है—इतना सुना, फिर भी परिवर्तन क्यों नहीं हुआ? इस विषय में हम वास्तविकता की उपेक्षा करते हैं।

व्यवहार को बदलने का संदेश या निर्देश जब तक सूक्ष्मतर शरीर तक नहीं पहुंचता तब तक व्यवहार में परिवर्तन नहीं होता।

परिवर्तन के लिए परिवर्तन की प्रक्रिया को जानना जरूरी है।

१५ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपक्ष भावना-(१)

प्रतिपक्ष भावना के द्वारा पुराने संस्कारों को समाप्त और नए संस्कारों का निर्माण किया जा सकता है—

क्रोध	प्रतिपक्ष	क्षमा
मान	प्रतिपक्ष	मृदुता
माया	प्रतिपक्ष	ऋजुता
लोभ	प्रतिपक्ष	संतोष

प्रतिपक्ष भावना के द्वारा संस्कार निर्माण की पद्धति इस प्रकार है—

१. प्रतिपक्षी भाव पर दीर्घकालिक एकाग्रता।

२. कायोत्सर्ग की मुद्रा में स्वतः सुझाव। सुझाव दूसरे व्यक्ति के द्वारा भी लिया जा सकता है।

३. प्रतिपक्ष भावना के बार-बार भीतर तक पहुंचने से नए संस्कार के निर्माण में सफलता मिलती है।

१६ मई

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपक्ष भावना-(२)

प्रतिपक्ष भावना का प्रयोग आदत को बदलने का सफल प्रयोग है। इसकी सीमा को समझना जरूरी है। इसका प्रयोग मोह के परिवार को उपशान्त करने में सफल होता है। हर किसी अवस्था को बदलने में वह कारगर नहीं होता। क्रोध, अहंकार आदि कषाय मोह परिवार के सदस्य हैं। इसलिए क्षमा की भावना से क्रोध को तथा मृदुता की भावना से अहंकार को समाप्त किया जा सकता है।

१७ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव-विशुद्धि और गंध

हर मनुष्य के शरीर में गंध होती है। उसके आधार पर व्यक्ति के चरित्र का ज्ञान किया जा सकता है। योगी के शरीर में सुगन्ध होती है। ध्यान-काल में भी कभी-कभी सुगंध का अनुभव होता है। जैसे-जैसे लेश्या की विशुद्धि होती है, गंध सुरभि-गंध में बदल जाती है।

१८ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रशस्त रंग

दिन-रात के चौबीस घंटों का निरीक्षण करो, परीक्षण करो। कितने क्षणों तक लेश्या या भावधारा प्रशस्त रहती है और कितने क्षणों तक वह अप्रशस्त रहती है?

निरीक्षण और परीक्षण अप्रशस्त से प्रशस्त की ओर ले जाने का हेतु बनता है।

भावधारा को प्रशस्त रखने में प्रशस्त रंग सहायक बनते हैं।

रंग दो प्रकार के होते हैं—

१. प्रकाश का रंग (Bright colour)

२. अंधकार का रंग (Dark colour)

१९ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृष्णवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति कृष्णलेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में कृष्ण वर्ण की प्रधानता होती है।

कृष्णलेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. मन, वाणी और शरीर पर नियन्त्रण नहीं होना

२. इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं होना

३. क्रूरता

४. हिंसा

५. क्षुद्रता

६. इच्छा पर नियन्त्रण की शक्ति का अभाव

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में काले रंग की प्रधानता है।

२० मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीलवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति नीललेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में नीलवर्ण की प्रधानता होती है।

नीललेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. ईर्ष्या

२. निर्लज्जता

३. गृद्धि

४. प्रद्वेष

५. शठता

६. रसलोलुपता

७. सुख-सुविधा की गवेषणा

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में नीले रंग की प्रधानता है।

२१ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कापोतवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति कापोतलेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में कापोतवर्ण की प्रधानता होती है।

कापोतलेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. वक्र आचारवाला

२. मायावी

३. मात्सर्ययुक्त स्वभाववाला

४. कुटिल व्यवहारवाला

५. दोषपूर्ण वचन बोलनेवाला

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में कापोत रंग की प्रधानता है।

२२ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरुणवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति तेजोलेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में अरुणवर्ण की प्रधानता होती है।

तेजोलेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. विनम्र वृत्ति

२. अचपलता

३. इन्द्रिय और मन का संयम

४. पापभीरुता

५. सबका हितैषी

६. धर्मप्रियता

७. धर्म में दृढ़ता—स्वीकृत भार का निर्वहन।

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में अरुण रंग की प्रधानता है।

२३ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पीतवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति पीतलेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में पीतवर्ण की प्रधानता होती है।

पद्मलेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. चित्त की प्रशान्ति।

२. इन्द्रिय पर विशिष्ट विजय।

३. क्रोध, मान, माया और लोभ प्रतनु हो जाते हैं, इसलिए उपशम विशिष्ट बन जाता है।

४. वाणी का संयम

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में पीत रंग की प्रधानता है।

२४ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वेतवर्ण प्रधान आभामण्डल

जो व्यक्ति शुक्ललेश्या प्रधान होता है उसके आभामण्डल में श्वेतवर्ण की प्रधानता होती है।

शुक्ललेश्या वाले व्यक्ति की भावधारा को समझने के लिए कुछ भावों का उल्लेख आवश्यक है—

१. मन, वचन और काया की गुप्ति विशिष्ट हो जाती है।

२. चित्त सदा प्रसन्न रहता है।

३. आर्त्त और रौद्र ध्यान का प्रसंग नहीं आता।

४. धर्म्य और शुक्लध्यान की धारा प्रवाहित रहती है।

इन भावों के आधार पर निर्णय किया जा सकता है कि इस व्यक्ति के आभामण्डल में श्वेत रंग की प्रधानता है।

२५ मई

२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार प्रेक्षा-(१)

एकाग्रता और विचार में द्वन्द्व है। यदि विचार का प्रवाह है तो एकाग्रता नहीं हो सकती और यदि एकाग्रता है तो विचार का प्रवाह नहीं हो सकता। एकाग्रता के लिए जरूरी है एक विचार पर केन्द्रित होना और विचार के प्रवाह को अवरुद्ध करना।

विचार को रोकने का प्रयत्न एकाग्रता में सहायक नहीं होता। विचार को देखना शुरू करो, प्रवाह रुक जाएगा। विचार को देखना ध्यान-साधना का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है।

२६ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार के नियम

विचार की उत्पत्ति के चार हेतु हैं—

१. वस्तुदर्शन—वस्तुदर्शन के समय ये प्रश्न उपस्थित होते हैं—यह क्या है? यह किसकी है? यह कैसी है? इसका क्या उपयोग है? आदि-आदि।

२. स्मृति—अतीत में दृष्ट, श्रुत या अनुभूत विषय जब स्मृति में आता है, विचार का प्रवाह शुरू हो जाता है।

३. कल्पना—किसी वस्तु का निर्माण और रचना के लिए योजना बनाई जाती है, वह भी विचार की उत्पत्ति का हेतु बनती है।

४. परिस्थिति—भावजनित और ऋतुजनित परिस्थिति विचार को उत्तेजना देती है।

२७ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभेद प्रणिधान-(१)

ध्याता और ध्येय के साथ संबंध स्थापित होने पर ही जप अथवा ध्यान सफल होता है।

सफलता के लिए प्रणिधान का अभ्यास जरूरी है। प्रणिधान दो प्रकार का होता है—

१. संभेद प्रणिधान

२. अभेद प्रणिधान

अभ्यास का प्रारम्भ संभेद प्रणिधान से करना चाहिए। संभेद प्रणिधान के अभ्यास में ध्याता ध्येय के साथ संबंध स्थापित करता है, ध्येय के साथ उसका संश्लेष हो जाता है।

२८ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभेद प्रणिधान-(२)

संभेद प्रणिधान की प्रक्रिया का ज्ञान आवश्यक है। अर्हं का जप या ध्यान करने वाले साधक को अर्हं के वलय की कल्पना करनी चाहिए। शरीर के चारों ओर अर्हं का वलय बना हुआ है और स्वयं उस वलय के मध्य स्थित है। इस विधि से अर्हं के साथ संश्लेष हो जाता है।

संभेद प्रणिधान का अभ्यास अभेद प्रणिधान की पृष्ठभूमि बन जाता है।

२६ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभेद प्रणिधान

ध्येय के साथ अभेद स्थापित कर जप अथवा ध्यान करना अभेद प्रणिधान का प्रयोग है। ध्यान करने वाला ध्येय के वाचक पद का ज्ञानकेन्द्र पर ध्यान करे। फिर वाचक के अर्थ के साथ एकात्मकता स्थापित करे। वह मैं ही हूं ऐसा अनुभव करे। इस अभ्यास से अभेद प्रणिधान सिद्ध हो जाता है।

अभेद प्रणिधान की सिद्धि के लिए निरंतर और दीर्घकाल तक अभ्यास करना जरूरी है।

३० मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रसधातु प्रेक्षा

शरीर प्रेक्षा का एक प्रयोग है सप्तधातु प्रेक्षा। मनुष्य का शरीर सात धातुओं से बना हुआ है। उनकी प्रेक्षा पद्धति यह है—

रसधातु—इसका ध्यान पाचनतन्त्र पर किया जाता है। हम जिस अवयव को देखते हैं वह पुष्ट हो जाता है। जिस अवयव पर ध्यान नहीं किया जाता, वह धीरे-धीरे सिकुड़ने लग जाता है।

पाचनतन्त्र को स्वस्थ रखने के लिए आसन का प्रयोग किया जाता है। वह कार्य पाचन तन्त्र की प्रेक्षा के द्वारा भी संभव हो सकता है। वृद्ध और रुग्ण व्यक्तियों के लिए यह बहुत उपयोगी है।

३१ मई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रक्तधातु प्रेक्षा

रक्त की संचार प्रणाली पूरे शरीर में व्याप्त है। वह जितनी स्वच्छ और स्वस्थ होती है उतना ही व्यक्ति स्वस्थ रहता है। रक्त प्रणाली की स्वस्थता के लिए आनन्दकेन्द्र की प्रेक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसे शक्तिशाली बनाने के लिए 'क' और 'ठ'—इन दो वर्णों का जप भी किया जाता है।

०१ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मांसधातु प्रेक्षा

मांस और मांसपेशियां हमारी प्रवृत्ति और शक्ति के हेतु हैं। मांसपेशियों की प्रेक्षा उनकी कार्य-प्रणाली को व्यवस्थित बनाती है। इनके ध्यान का केन्द्र तैजस केन्द्र है। इनकी स्वस्थता के लिए तैजस केन्द्र की प्रेक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसे शक्तिशाली बनाने के लिए 'ड़' और 'फ'—इन दो वर्णों का जप भी किया जाता है।

०२ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेदधातु प्रेक्षा

मेद अनुपाततः कम हो या अधिक हो—ये दोनों स्थितियां स्वास्थ्य के लिए प्रतिकूल हैं। कृशकाय व्यक्ति में शक्ति की कमी होती है तो मोटापा व्यक्ति को रुग्ण बना देता है। स्वास्थ्य केन्द्र पर ध्यान करने से मेद का संतुलन होता है। मेदधातु का संतुलन बनाने के लिए 'ब' और 'ल'—इन दो वर्णों का जप किया जाता है।

०३ जून
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्थिधातु प्रेक्षा

अस्थि शरीर का मूल आधार है। अस्थि-संस्थान जितना सुदृढ़ और स्वस्थ होता है, शरीर उतना ही स्वस्थ रहता है।

अस्थि संस्थान की स्वस्थता के लिए शक्ति केन्द्र पर ध्यान किया जाता है। यह केन्द्र पृथ्वी तत्त्व का है और अस्थि-संस्थान का संबंध पृथ्वी तत्त्व से है। इसे शक्तिशाली बनाने के लिए 'व' और 'स'—इन दो वर्णों का जप किया जाता है।

०४ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मज्जाधातु प्रेक्षा

संस्कार और ज्ञान की दृष्टि से मज्जा का शरीर में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। संस्कार को बदलने और नए संस्कार का निर्माण करने के लिए उसकी बहुत उपयोगिता है। इसकी पुष्टि के लिए दर्शन केन्द्र पर ध्यान किया जाता है। मज्जा-धातु को शक्तिशाली बनाने के लिए 'ह' और 'क्ष' अथवा ह्रीं' और 'क्ष्वीं' का जप किया जाता है।

०५ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्रधातु प्रेक्षा

यह सब धातुओं का नवनीत है। इसकी पुष्टि का संबंध भी दर्शन केन्द्र के साथ है। शुक्र को ओज में बदलने के लिए पिट्युइटरी (पीयूष) ग्रन्थि को सुझाव दिया जाए तो शुक्र ओज में बदल सकता है। मनोबल के विकास में अधिक सहयोगी हो सकता है। शुक्रधातु को शक्तिशाली बनाने के लिए 'हुं' और 'ह्रां' का जप किया जाता है।

०६ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्रसिद्धि की पहचान

मंत्र का जप बहुत उपयोगी है। बहुत लोग इसका प्रयोग करते हैं किन्तु जप के द्वारा होने वाली शारीरिक और मानसिक प्रतिक्रियाओं का निरीक्षण होना आवश्यक है। उनका सम्यक् निरीक्षण किए बिना मंत्रसिद्धि तक पहुचना सहज सरल नहीं है। जप के समय शरीर में अनेक प्रकार के प्रकम्पन पैदा होते हैं। वे प्रकम्पन इस बात की सूचना देते हैं कि जप कितना आगे बढ़ा है। इस प्रकार मानसिक प्रकम्पनों का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर पता चलता है कि मन में कितना उत्साह और उल्लास बढ़ा। मानसिक उल्लास की वृद्धि-मंत्रसिद्धि की प्रमुख पहचान है।

०७ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहां होता है मंत्र का उत्थान?

शब्द दो प्रकार का होता है—

१. सूक्ष्म २. स्थूल

सूक्ष्म शब्द प्राणमय और मनोमय होता है। स्थूल शब्द वर्णात्मक और अर्थ का व्यञ्जक होता है।

जप की साधना करने वाले व्यक्ति को यह जानना जरूरी है कि जप्य मंत्र के शब्दों का उत्थान कहां से होता है और वे कहां तक समाप्त होते हैं? प्राणमय शब्दों का उत्थान शक्तिकेन्द्र (मूलाधार) से होता है। वह उच्चारण के स्थानों तक पहुंच जाता है।

०८ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्र की सिद्धि

मंत्र का जप करते समय इष्ट की सन्निधि का अनुभव करें। केवल शब्दोच्चारण से मंत्र की सिद्धि नहीं होती। शब्दोच्चारण के साथ-साथ इष्ट की सन्निधि का अनुभव होता है तब मंत्र प्राणवान बन जाता है।

जप के समय तैजस केन्द्र पर ध्यान केन्द्रित करें और अनुभव करें, वह प्रकाश से भर गया।

तैजस केन्द्र से प्रकाश की धारा को ऊपर उठाएं, उसे ज्ञानकेन्द्र तक ले जाएं। वहां उस मंत्र का अनुभव करें। साधना की सफलता मिल जाएगी।

०६ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्रोच्चारण की विधि-(१)

मंत्र साधक के लिए मंत्रोच्चारण की विधि का ज्ञान जरूरी है।

विधि के प्रमुख सूत्र ये हैं—

१. मंत्र के वर्णों का उच्चारण करते समय पूर्व वर्ण और उत्तर वर्ण के उच्चारण में अंतराल नहीं होना चाहिए।

२. बीजाक्षरों का उच्चारण करते समय ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत मात्राओं पर ध्यान देना चाहिए। मंत्राक्षरों का उच्चारण न अति शीघ्र और न अति विलम्बित होना चाहिए। उच्चारण की मध्यम पद्धति उचित है।

१० जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्रोच्चारण की विधि-(२)

३. मंत्र का उच्चारण स्वाभाविक श्वास के साथ करना चाहिए। श्वास यदि शीघ्र गति से चलता है तो मंत्र का सम्यक् अनुभव नहीं होता। श्वास यदि एकदम धीमी गति से चलता है तो मंत्र का उच्चारण बीच में ही रुक जाता है। इसलिए मध्यवाही श्वास के साथ मंत्र का उच्चारण करना चाहिए।

यदि मंत्र बहुत लम्बे हों तो उनका विभाग कर मध्यमवाही श्वास के साथ उच्चारण करना चाहिए।

११ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्र साधना के तीन सोपान

मंत्र साधना की तीन अवस्थाएं हैं—

१. विकल्प—विचारात्मक

२. संजल्प—अंतर्जल्प

३. विमर्श—निर्विकल्पक ज्ञान

विकल्प प्रारम्भिक अवस्था है। संजल्प की अवस्था में मंत्र का बार-बार मानसिक उच्चारण होता है। उससे मंत्र की अर्थात्मा स्पष्ट होती जाती है।

संजल्प का अभ्यास करते-करते मंत्र देवता के साथ अभेद प्रणिधान हो जाता है। उस अवस्था में ध्येय का साक्षात्कार हो जाता है। वह मंत्र की निर्विकल्प अवस्था है।

१२ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजपाजप

हठयोग में अजपाजप का बहुत महत्त्व रहा है। उसके लिए 'सोऽहं' का प्रयोग किया जाता है। यह श्वास की ध्वनि का प्रतीक है। श्वास लेते समय 'सकार' और श्वास के रेचन के समय 'हं' की ध्वनि का अनुभव होता है।

अजपाजप के लिए १. सोऽहं २. हंसः ३. ॐ ४. अर्हम् ५. हुं का प्रयोग किया जाता है।

'हुं' कूर्मनाड़ी का बीज है। वह महाध्वनि है। उसके अजपाजप तक पहुंच जाने पर विकार विसर्जित हो जाते हैं।

१३ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुरक्षा कवच

समाज में सब प्रकार के लोग होते हैं। कुछ व्यक्ति दूसरों को प्रभावित कर उन्हें गलत दिशा में ले जाने का प्रयत्न करते हैं। इस स्थिति में साधक को सावधान रहना जरूरी है।

कोई असाध्य या बड़ा कार्य करना हो अथवा कोई दूसरा व्यक्ति अपनी शक्ति का प्रयोग कर, साधक की शक्ति को कम या विकृत करने का प्रयोग करे तो उस समय साधक अपने इष्ट के तेजस्वी रूप को अपने में समापन्न कर ले, उससे तादात्म्य हो जाए। यह बाह्य प्रभाव से बचने का महत्त्वपूर्ण कवच है।

१४ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कवच रचना

निम्न विचारों से अथवा निम्न वृत्ति वालों की संगति से बचने के लिए तालयुक्त श्वास लो। मानसिक कल्पना के द्वारा अपने चारों ओर विचार का अंडाकार घेरा बनाओ। यह कवच है।

एक मान्त्रिक मंत्र-साधना के समय कवच का निर्माण करता है। यदि वह सुरक्षा कवच का निर्माण न करे तो साधना में विघ्न उपस्थित हो सकता है। एक साधक को भी अपनी पवित्रता बनाए रखने के लिए कवच का निर्माण अवश्य करना चाहिए।

१५ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चारण का मूल्य-(१)

संस्कृत में 'नमो' और प्राकृत में 'णमो' दोनों शब्द नमस्कार के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं। किन्तु 'न' और 'ण' के उच्चारण की प्रतिक्रिया भिन्न होती है।

जीभ ऋण (Negative) विद्युत प्रधान है और मस्तिष्क धन (Positive) विद्युत का केन्द्र है। तालु मस्तिष्क की निचली परत है।

'ण' का बार-बार लयबद्ध उच्चारण करने पर जीभ का तालु से घर्षण होता है। यह ऋण और धन विद्युत का संगम स्थल है। इससे दर्शनकेन्द्र का जागरण होता है। पिट्युइटरी और पाइनिअल ग्रन्थियां प्रभावित होती हैं।

१६ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चारण का मूल्य-(२)

मंत्र-जप करने वाले साधक के लिए उच्चारण पर ध्यान देना आवश्यक है। उच्चारण के साथ ध्वनि के प्रकम्पन पैदा होते हैं। यदि उच्चारण सही नहीं है तो वे प्रकम्पन अपना कार्य नहीं कर सकते।

साधारणतः उच्चारण का नियम भाषा के साथ जुड़ा हुआ है। इस नियम की व्याख्या वैयाकरणों ने विस्तारपूर्वक की है। उसके लिए उच्चारण के स्थानों पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है।

१७ जून
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चारण के स्थान

वर्णों के स्थान हैं—

१. उर — ङ ञ ण न म से युक्त हकार।

२. कण्ठ — अ, क वर्ग, ह और विसर्ग।

३. मूर्धा — ऋ, ट वर्ग, र, ष।

४. दन्त — लृ, त वर्ग, ल, स।

५. नासिका — अनुस्वार।

६. औष्ठ — उ, प वर्ग।

७. तालु — इ, च वर्ग, य, श।

१८ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ के साथ तादात्म्य

शब्द और अर्थ—मंत्र-साधना में इन दोनों पर ध्यान देना जरूरी है। उसके लिए पहली शर्त है शब्द का विधिपूर्वक उच्चारण ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत का यथोचित उच्चारण।

अर्थ का महत्त्व उच्चारण से भी अधिक है। शब्द वाचक है। उसका वाच्य जितना स्पष्ट होता है और उसके साथ जितना तादात्म्य स्थापित होता है, उतनी ही मंत्र की सिद्धि प्राप्त होती है। इसलिए जप करने वाले को वाच्य अर्थ का स्पष्ट बोध होना चाहिए। उसके साथ एकात्मकता स्थापित कर उसका प्रयोग करना चाहिए।

१९ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातृका

मातृका के चार प्रकार हैं—

१. केवलमातृका

२. बिंदुयुक्तमातृका

३. विसर्गयुक्तमातृका

४. बिंदु और विसर्गयुक्तमातृका

'अ सि आ उ सा' केवल मातृका हैं। 'अर्हं'—यह बिंदुयुक्तमातृका है। 'ह:'—यह विसर्गयुक्त-मातृका है। 'ह्रीं ह:'—यह बिन्दु और विसर्गयुक्त-मातृका है। इन चारों प्रकारों की मातृका के न्यास अथवा जप के द्वारा लौकिक और लोकोत्तर—दोनों प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं। यह मंत्रशास्त्र का अभिमत है और ऐसा अनुभव भी किया जाता है।

२० जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता-(१)

एकाग्रता प्रारम्भिक ध्यान-साधना के लिए बहुत जरूरी है। उसकी साधना के लिए कुछ विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना जरूरी है।

१. मन में उत्पन्न होने वाले विकल्पों का उत्तर मत दो, उनकी उपेक्षा करो।

२. ध्येय की एक आकृति पर ही मन केन्द्रित हो। मन की शक्ति को एक ही मार्ग से बहने दो।

३. इष्ट वस्तु पर शीघ्र मन एकाग्र होता है।

४. अनेक विचारों का क्रम भी यदि तद्रूप हो तो वह एकाग्रता का साधन बन सकता है।

२१ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता-(२)

निर्विचार अवस्था अतीन्द्रिय चेतना के जागरण के लिए एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। कोई भी साधक प्रथम चरण में निर्विचार नहीं होता। जैसे-जैसे एकाग्रता सघन होती है, निर्विचार अवस्था आ जाती है। इस अवस्था में मस्तिष्क में अल्फा तरंगें प्रभावित होती हैं और व्यक्ति अपूर्व आनन्द का अनुभव करता है। एकाग्रता व निर्विचारता की स्थिति में जो आभामण्डल बनता है वह बहुत ही उन्नत और चमकीला होता है।

२२ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता-(३)

सहज श्वास अथवा दीर्घश्वास का प्रयोग एकाग्रता के लिए तथा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है।

जब-जब चंचलता बढ़े, उस समय दीर्घश्वास का आलम्बन उसकी वृद्धि को रोकने में सफल होता है। माला जप करने वाले इस बात पर विशेष ध्यान केन्द्रित करें। दीर्घश्वास के साथ चलने वाला जप एकाग्रता के साथ हो सकता है। श्वास की मंदगति शरीर और मन की चंचलता को कम करती है। यह सिद्ध प्रयोग है।

२३ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सघन एकाग्रता

एकाग्रता को सघन करने के लिए सूक्ष्म आलम्बन आवश्यक है। प्रथम अवस्था में श्वास के साथ अर्हं का जप किया जाता है। उत्तर अवस्था में शब्द छूट जाता है। केवल श्वास की ध्वनि को सुनने का अभ्यास किया जाता है। श्वास लेने और छोड़ने के क्षण में भी ध्वनि होती है। उस ध्वनि को सुनने का अभ्यास एकाग्रता को सघन बनाता है। शब्दातीत चेतना के क्षण में सूक्ष्म सत्य को पकड़ने की शक्ति पैदा होती है इसलिए अभ्यास की उत्तर भूमिका में सूक्ष्म आलम्बन का प्रयोग जरूरी है।

२४ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता के स्तर

एकाग्रता के विकास के साथ गंध और रस का भी अनुभव किया जाता है।

चंचलता में रंग, गंध और स्पर्श को हमारी व्यक्त चेतना पकड़ नहीं पाती। एकाग्रता की अवस्था में उनका ग्रहण हो जाता है।

एकाग्रता के अनेक स्तर हैं। पृथक्-पृथक् स्तरों पर पृथक्-पृथक् प्रकार के अनुभव होते हैं। क्षिप्रग्रहण, चिरग्रहण आदि विकल्प इन पर ही निर्भर करते हैं।

२५ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता की भूमिकाएं

एकाग्रता जैसे-जैसे पुष्ट होती है वैसे-वैसे विषय बोध का परिवर्तन होता जाता है। एकाग्रता की अनेक भूमिकाएं हैं—

१. ध्यानावस्था में बाह्य वस्तु का बोध बना रहता है।

२. बाह्य वस्तु का बोध नही होता।

३. शरीर का ज्ञान बना रहता है।

४. शरीर का ज्ञान नहीं रहता। इस अवस्था में साधक को अनुभव होता है, मेरा शरीर कहां चला गया?

५. ध्येय का ज्ञान बना रहता है।

६. ध्येय का ज्ञान नही रहता। इस भूमिका में ध्याता और ध्येय एक बन जाते हैं।

२६ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता की अवस्थाएं

ध्यान का अर्थ केवल एकाग्रता नहीं है। एकाग्रता ध्यान है, पर ध्यान एकाग्रता से परे भी है।

एकाग्रता सविकल्प ध्यान है। वह जैसे-जैसे सघन बनती है, विकल्प और विचार निःशेष होते चले जाते हैं।

एकाग्रता की प्रथम अवस्था में शब्दबोध और अर्थबोध दोनों होते हैं। ध्यान करने वाला बाहर के शब्द को सुनता है और उसके अर्थ पर भी ध्यान चला जाता है।

एकाग्रता की दूसरी अवस्था में शब्द सुनाई देता है, अर्थ पर ध्यान नहीं जाता।

एकाग्रता की तीसरी अवस्था में शब्द भी सुनाई नहीं देता।

२७ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता के दो रूप

एक बगुला मछली को पकड़ने के लिए एकाग्र हो जाता है। क्या यह ध्यान है?

अवश्य!

तो बगुला भी अन्तर्मुख हो जाता है?

नहीं! उसका ध्यान बहिर्मुखी है, आसक्ति से जुड़ा हुआ है। इसीलिए भगवान महावीर ने ध्यान को दो श्रेणियों में विभक्त कर दिया—आर्त्तध्यान और धर्म्यध्यान।

२८ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता का परिणाम

एक श्वास में २१ बार जप करने का परिणाम—

१. दीर्घश्वास का अभ्यास स्वतः हो जाता है।

२. फुपफुस का व्यायाम अपने आप हो जाता है।

३. निर्विचार अथवा निर्विकल्प ध्यान की साधना भी स्वतः हो जाती है।

अभ्यास के परिपक्व होने पर एक श्वास में बड़े जप-मंत्र का प्रयोग किया जा सकता है, छोटे जप-मंत्र की संख्या बढ़ाई जा सकती है।

२६ जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी तत्त्व

पृथ्वी तत्त्व का स्थान है शक्तिकेन्द्र (मूलाधार चक्र)। अस्थि, मांस, त्वचा, रोम और रक्तवाहिनियां—इन पांचों का पृथ्वी तत्त्व से संबंध है। कनिष्ठा अंगुली को अंगूठे से दबाने पर शरीर में पृथ्वी तत्त्व का संतुलन होता है।

यकृत, आमाशय और प्लीहा पर इस तत्त्व का नियन्त्रण है। इसकी अधिकता से कफ, श्वास में भारीपन, आलस्य, उल्टी, पैर में कृमि और चक्षु रोग आदि होते हैं। यह तत्त्व यदि पूर्ण रूप से संतुलित हो तो व्रण, चमड़ी, हड्डी—सब ठीक हो जाते हैं।

२१ दिसम्बर से २० मार्च तक शरीर में पृथ्वी तत्त्व की प्रधानता रहती है।

३० जून
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जल तत्त्व

जल तत्त्व का स्थान है स्वास्थ्यकेन्द्र (स्वाधिष्ठान चक्र)। कान, सिर के बाल और हड्डियों में जलीय परमाणुओं की विद्यमानता है। अनामिका अंगुली को अंगूठे से दबाने पर शरीर में जलतत्त्व का संतुलन होता है।

आंसू, कफ, थूक, रक्त, प्रस्वेद, श्लेष्म आदि पर इस तत्त्व का नियन्त्रण है। इसकी अधिकता से गैस, हृदय पर असर, मुख फीका, हकलाना, चमड़ी में कम्पन आदि रोग होते हैं। इस तत्त्व पर नियन्त्रण होने से भूख-प्यास शान्त होती है और मैत्री का विपाक होता है।

२१ मार्च से २० जून तक शरीर में जल तत्त्व की प्रधानता रहती है।

०१ जुलाई

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्नि तत्त्व

अग्नि तत्त्व का स्थान है तैजसकेन्द्र (मणिपुर चक्र)। रक्तवाहीनियों में आग्नेय परमाणु विद्यमान रहते हैं। अग्नि तत्त्व का स्थान है अंगूठा। तर्जनी अंगुली को अंगूठे से दबाने पर शरीर में अग्नि तत्त्व सक्रिय होता है।

हृदय और आंतों पर इस तत्त्व का नियन्त्रण है। इसकी अधिकता से कब्ज, शरीर पर धब्बे आदि शारीरिक बीमारियां होती हैं। इसकी कमी से छोटी आंत प्रभावित होती है। यह तत्त्व भूख, प्यास, नींद और आलस्य को दूर कर देदीप्यता प्रदान करता है। इस तत्त्व की प्रधानता के समय कोई निर्णय नहीं लेना चाहिए।

२१ जून से २० सितम्बर तक शरीर में अग्नि तत्त्व की प्रधानता रहती है।

०२ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वायु तत्त्व

वायु तत्त्व का स्थान है आनन्दकेन्द्र (अनाहत चक्र)। यह समूचे शरीर में व्याप्त है। तर्जनी अंगुली को अंगूठे के मूल में दबाने पर शरीर में वायु तत्त्व सक्रिय होता है। इसकी सक्रियता से स्फूर्ति रहती है, प्राणशक्ति प्रबल बनती है, शारीरिक शक्ति मजबूत होती है।

घ्राण शक्ति पर इस तत्त्व का नियंत्रण है। इसकी अधिकता से गले व छाती का दर्द, बुखार, कब्ज, हिचकी, लकवा और गठिया आदि रोग उत्पन्न होते हैं। इसके प्राधान्य से नकारात्मक विचार व मानसिक तनाव पैदा होता है।

२१ सितम्बर से २३ दिसम्बर तक शरीर में वायु तत्त्व की प्रधानता रहती है।

०३ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकाश तत्त्व

आकाश तत्त्व का स्थान है विशुद्धि केन्द्र (विशुद्धिचक्र)। शरीर के पोले भाग में यह तत्त्व विद्यमान है। मध्यमा अंगुली को अंगूठे से दबाने पर शरीर में आकाश तत्त्व सक्रिय होता है। इसकी सक्रियता से आध्यात्मिक जागरण होता है, शरीर कान्तिमय बनता है और स्वभाव में उदारता आती है।

फुपफुस, यकृत और पित्ताशय पर इसका नियन्त्रण है। इसके आधिक्य से निराशा, चिड़चिड़ापन, गुस्सा और मानसिक बीमारियां होती हैं। इस तत्त्व का प्रभुत्व होने से मानसिक शक्तियों का जागरण होता है।

०४ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्व और हमारा शरीर

चैतन्यकेन्द्रों में तत्त्वों का स्थान बतलाया गया है। समग्र शरीर की दृष्टि से विचार करें तो तत्त्व के स्थान के बारे में नई दृष्टि मिलती है।

तत्त्व		स्थान
पृथ्वी	—	पैर से घुटने तक
जल	—	घुटने से रीढ़ की हड्डी के निचले सिरे तक
अग्नि	—	रीढ़ की हड्डी के निचले सिरे से हृदय तक
वायु	—	हृदय से भ्रूमध्य तक
आकाश	—	भ्रूमध्य से मूर्धा तक

तत्त्व-साधना की दृष्टि से इसका भी बहुत महत्त्व है।

०५ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्व और वर्ण

मनुष्य का शरीर पांच तत्त्वों से बना हुआ है—

१. पृथ्वी २. जल ३. अग्नि

४. वायु ५. आकाश।

प्रत्येक तत्त्व का अपना वर्ण है—

तत्त्व	वर्ण
पृथ्वी	पीला
जल	सफेद
अग्नि	लाल
वायु	नीला
आकाश	सर्व वर्णवाला

०६ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्व और बीजमंत्र

तत्त्व की साधना के लिए बीजाक्षरों का विधान किया गया है।

तत्त्व	बीजमंत्र	परिणाम
पृथ्वी	लं	देहलाभ
जल	वं	भूख, प्यास आदि की सहिष्णुता
अग्नि	रं	आतप को सहन करने की क्षमता
वायु	यं	लाघव
आकाश	हं	अतीन्द्रिय ज्ञान और ऐश्वर्य

०७ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाड़ी और तत्त्व

नाड़िया तीन हैं—इडा, पिंगला और सुषुम्ना। तत्त्व पांच हैं—१. पृथ्वी तत्त्व २. जल तत्त्व ३. अग्नि तत्त्व ४. वायु तत्त्व ५. आकाश तत्त्व।

पिंगला के प्रवाह में तीन तत्त्व चलते हैं—१. अग्नि तत्त्व २. वायु तत्त्व ३. आकाश तत्त्व।

आंख बंद कर दर्शन केन्द्र के सामने जो रंग दिखाई दे उससे संबद्ध तत्त्व का पता चल जता है।

सफेद रंग	—	जल तत्त्व
पीला रंग	—	पृथ्वी तत्त्व
लाल रंग	—	अग्नि तत्त्व
नीला रंग	—	वायु तत्त्व
आसमानी रंग	—	आकाश तत्त्व

०८ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदत परिवर्तन का सूत्र

मनोविज्ञान में मन के दो भाग किए जाते हैं—

१. चेतन मन

२. अचेतन मन

कल्पना, स्मृति और चिंतन—ये चेतन मन के कार्य हैं। आदत और स्वसंचालित क्रिया अचेतन मन के कार्य हैं। मनुष्य का स्वभाव अचेतन मन के अनुसार निर्मित होता है इसलिए आदत को बदलने के लिए चेतन मन के परे जाना आवश्यक है। सुझाव, संकल्प आदि अचेतन मन तक पहुंचने पर ही कार्यकारी होते हैं।

०६ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहले शरीर फिर मन

मानसिक विकास हो—यह चाह बहुत प्रबल है। साधक को मानसिक विकास से पहले कायिक विकास पर ध्यान देना चाहिए। साधना के क्षेत्र में शरीर जितना सहयोगी है, उतना मन नहीं।

जो साधक शरीर में प्रवहमान प्राण के प्रवाह को नहीं जानता, शरीर में बनने वाले विभिन्न रसायनों और प्रोटीनों को नहीं जानता, वह साधना का विकास नहीं कर सकता, मानसिक विकास भी नहीं कर सकता।

१० जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन की प्रकृति

श्वास न प्रिय होता है और न अप्रिय। वह जीवन का एक नियम है। उसके आधार पर वह आता रहता है।

श्वास एकाग्रता का बहुत अच्छा आलम्बन है। मन की चंचलता को कम करने के लिए उसे देखना जरूरी है। जो व्यक्ति श्वास की गति को देखना शुरू करता है वह मन की गति को नियमित कर देता है।

चंचलता मन की प्रकृति है। उसे निश्चल नहीं किया जा सकता। श्वास के आलम्बन से उसकी चंचलता को कम किया जा सकता है।

११ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन की शक्ति

एकाग्रता, संकल्प और निर्विचार अवस्था-साधना के ये तीन महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं। इनके द्वारा मन की शक्ति का विकास किया जा सकता है।

विकसित मन की कार्यक्षमता बढ़ जाती है—

१. उसके द्वारा दूसरे के विचार जाने जा सकते हैं।

२. दूसरों तक अपने विचार भेजे जा सकते हैं।

३. दूरस्थ लोगों को निर्देश दिए जा सकते हैं।

४. दूसरों के विचार बदले जा सकते हैं।

५. दूसरों को स्वस्थ किया जा सकता है।

१२ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानसिक शक्ति का विकास

मन की शक्ति कल्पना से अधिक है। उसके विकास के सूत्र हाथ में न आए तो शक्ति का उपयोग नहीं हो सकता। निश्चित लक्ष्य बनाएं। लक्ष्य की ओर गति करने के लिए अपेक्षित एकाग्रता यदि हो तो शक्ति का अकल्पित प्रस्फोट हो सकता है।

विकास के लिए एक सूत्र बनाओ। उस पर विचार करो। कुछ समय बाद विचार से निर्विचार की अवस्था में चले जाओगे। ज्ञात या अज्ञात रूप में शक्ति का जागरण शुरू हो जाएगा।

१३ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाना होगा मन से परे

क्रोध नहीं करना चाहिए, उसका परिणाम अच्छा नहीं होता—यह जानता हुआ भी आदमी क्रोध करता है।

अहंकार आदि प्रत्येक वृत्ति की भी यही स्थिति है। ऐसा क्यों? मन नहीं चाहता—यह काम करूं, फिर भी आदमी वह काम कर लेता है।

इसका कारण समझने का प्रयत्न करें। मन के काम में बाधा पहुंचाने वाले तत्त्व कहां है? शरीर के भीतर हैं। इसलिए शरीर के भीतर होने वाले रासायनिक परिवर्तनों को जानना जरूरी है।

१४ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमन की साधना-(१)

मानसिक एकाग्रता अथवा मन से परे की साधना के जो साधन हैं उनमें जीभ का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

जीभ ज्ञानेन्द्रिय है। उसकी कर्मेन्द्रिय है जननेन्द्रिय। जीभ पर संयम करने का अर्थ है जननेन्द्रिय पर संयम।

हठयोग में जिह्वा संयम का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है खेचरी मुद्रा। उसकी साधना हर व्यक्ति के लिए सरल नहीं है। उसकी साधना का एक वैकल्पिक रूप है जीभ को तालु की ओर ले जाकर स्थिर करो।

जीभ को अधर में रखना जिह्वा-संयम का दूसरा प्रयोग है।

१५ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमन की साधना-(२)

विकल्प का उदय शब्द से होता है। शब्द को अशब्द में बदले बिना मौन कैसे संभव होगा ?

मौन का अर्थ है वाक्-विच्छेद। बहिर्जल्प को रोकना औपचारिक मौन है। अन्तर्जल्प को रोकना वास्तविक मौन है।

वर्ण को वर्णहीन अविच्छिन्न नादरूप में परिणत न किया जा सके, नाद को बिन्दुरूप में प्रतिष्ठित न किया जा सके, तब तक विकल्पों का अन्त संभव नहीं होगा।

१६ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनोरोग का हेतु

चिकित्सा-शास्त्र में मानसिक रोग पर बहुत विचार किया गया है। मानसिक चिकित्सा के लिए मनश्चिकित्सा का स्वतन्त्र विभाग है और मनश्चिकित्सक मनोरोगों की चिकित्सा भी करते हैं।

मनोरोग पैदा होने का कारण क्या है? इस पर विचार करें। शरीररोग मनोरोग के हेतु बनते हैं। इससे भी बड़ा कारण है भावात्मक रोग।

शरीर को संचालित करता है मन और मन को संचालित करता है भाव। यदि भाव स्वस्थ नहीं है तो मन स्वस्थ कैसे होगा?

१७ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्क-(१)

मस्तिष्क के दो भाग है—दायां भाग अचेतन और अर्द्धचेतन क्रियाओं से संबद्ध है। यह अध्यात्म, प्रज्ञा और अतीन्द्रिय चेतना का केन्द्र है। इसे प्रशिक्षित या जागृत करने के लिए चेतन मन को निष्क्रिय करना आवश्यक है। समाधि की अवस्था में वह स्वयं प्रशिक्षित होता है।

योग विद्या के अनुसार इडा का प्राणप्रवाह होता है तो मस्तिष्क का दायां भाग सक्रिय हो जाता है।

पिंगला का प्राणप्रवाह होता है तो मस्तिष्क का बायां भाग सक्रिय हो जाता है।

सुषुम्ना का प्राणप्रवाह होता है तब मस्तिष्क का पूरा भाग सक्रिय हो जाता है।

१८ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्क-(२)

मस्तिष्क का एक भाग भावात्मक (Emotional) है। वह अवचेतक (Hypothalamus) के माध्यम से पीयूष ग्रन्थि (Pituitory Gland) पर नियन्त्रण करता है। पीयूष ग्रन्थि के माध्यम से शेष सब ग्रन्थियों पर नियन्त्रण करता है। भावात्मक मस्तिष्क कषाय (क्रोध आदि) की अभिव्यक्ति का क्षेत्र है।

मस्तिष्क की कार्यप्रणाली का सम्यक् बोध किए बिना आवेश को संतुलित करना सरल नहीं है।

१६ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्क पौद्गलिक है

मस्तिष्क और मन एक नहीं हैं। मस्तिष्क पौद्गलिक (भौतिक) है। एक वैज्ञानिक मस्तिष्क के नाड़ी संस्थान और विद्युत-रासायनिक जाल का रेखाचित्र बना सकता है। वह चेतना को नहीं पकड़ सकता।

चेतना शक्ति का अजस्र स्रोत है। मस्तिष्क सारे शरीर का संचालन करता है और मस्तिष्क को संचालित करने वाली शक्ति है चित्त। मस्तिष्क की गतिविधि को समझने के लिए चेतना के सूक्ष्म सूत्रों और नियमों को पकड़ना जरूरी है।

२० जुलाई
२०००

Jain Education InternationaFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कैसे हो मस्तिष्क प्रभावित ?

यदि हम मस्तिष्क को प्रभावित कर सकें तो वह हमारे निर्देश को सहजता से स्वीकार करता है। उसको प्रभावित करने के ये साधन हैं—

१. आसन—सर्वाङ्गासन, शीर्षासन, विपरीतकरणी

२. प्राणायाम—दीर्घश्वास, अनुलोम-विलोम, कपालभाति

३. मुद्रा—खेचरी

४. बंध—जालन्धर बंध

५. स्वतःसूचन (Auto Suggestion) और सुझाव

६. भावना, सम्मोहन

७. मन्त्र

८. विद्युत तरंग—अल्फा आदि

९. रसायन—आयुर्वेद सम्मत, आयुर्विज्ञान सम्मत।

२१ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्कीय क्षमता

मस्तिष्क में असीम क्षमता है। चंचलता के कारण उनका उपयोग नहीं होता।

संपूर्ण मनोयोग से किसी एक दिशा में मस्तिष्कीय क्षमता को नियोजित किया जाए तो प्रसुप्त मस्तिष्कीय क्षमता को जगाया जा सकता है।

मस्तिष्क में इच्छानुकूल नई आदतों का प्रवेश किया जा सकता है। पुरानी आदतों में काट-छांट की जा सकती है। इस कार्य में जितनी एकाग्रता अधिक होगी, उतनी ही सफलता अधिक मिलेगी।

२२ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्कीय रसायन-(१)

रसायन के विषय में आधुनिक विज्ञान की खोज से एक नए रसायन का पता चला है। वह एण्डोरफिन (Andorphin) ग्रुप का एनकेफेलिन नाम का रसायन (Hormone) है। इसका निर्माण मस्तिष्क स्वयं करता है। इसके द्वारा मस्तिष्कीय नियन्त्रण को शिथिल करने वाले तत्त्वों की रोकथाम होती है। इससे मनोरोग और तनावजन्य व्याधि से मुक्ति मिलती है, मनोबल दृढ़ होता है।

२३ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्कीय रसायन-(२)

आक्रामकता का संबंध केवल भावधारा से ही नहीं है, उसका संबंध मस्तिष्कीय रसायनों से भी है।

मस्तिष्कीय रसायन आक्रामकता का नियमन करते हैं। सेराटोनीन और निरोपिनेफीन नामक न्यूरो-ट्रांसमीटर (मस्तिष्क में उत्पन्न रसायन) आपस में हमेशा एक विशिष्ट संतुलन बनाए रखते हैं। यह संतुलन बिगड़ता है तो व्यक्ति आक्रामक हो जाता है।

संकल्पशक्ति और सुझाव (Auto Suggestion) के द्वारा संतुलन को पुनः स्थापित किया जा सकता है।

२४ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्तिष्क और चन्द्रमा

चन्द्र की कलाओं का प्रभाव मनुष्य के सूर्य-स्वर और चन्द्रस्वर पर होता है। स्वर के माध्यम से उनका प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है। अष्टमी को व्रत आदि की साधना की जाती है उससे मस्तिष्क को अधिक शक्ति मिलती है और उसका संतुलन बना रहता है।

चन्द्रमा और समुद्र के ज्वार-भाटे का संबंध है। मनुष्य के शरीर में जलतत्त्व की प्रधानता है। इसलिए उसकी रश्मियों का प्रभाव उस पर पड़ता है। अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व तिथियों पर अधिक पड़ता है। इसीलिए उन दिनों में साधना के विशेष प्रयोग किए जाते हैं।

२५ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्त-(१)

योग साहित्य में मस्तिष्क पर बहुत कम लिखा गया है। चेतना अथवा चित्त के बारे में काफी लिखा गया है।

चेतना सूक्ष्म शरीर के माध्यम से स्थूल शरीर तक आती है। सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर का संगम-स्थल अवचेतक (Hypothelamus) है।

चित्त अपनी चेतनात्मक प्रवृत्ति शरीर, वाणी और मन के माध्यम से करता है। चित्त और मन एक नहीं हैं। चित्त चेतन है और मन पौद्गलिक है।

२६ जुलाई
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्त-(२)

१. बुद्धि—व्यवसाय अथवा निर्णय करने वाला चित्त।

२. मति—मनन करने वाला चित्त।

३. चित्त—स्थूल शरीर के साथ काम करने वाली चेतना।

४. भाव—चित्त का कषाय के आवेश और अनावेश की स्थिति में होना।

५. परिणाम—चित्त का नाना रूपों में परिणमन होता है।

ये चित्त की अवस्थाएं हैं। एक ही चित्त अवस्थाभेद और कार्यभेद से अनेक शब्दों द्वारा वाच्य होता है।

२७ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्त-(३)

चित्त चेतन है और मन पौद्गलिक है। इस सिद्धान्त को सापेक्ष दृष्टि से समझना आवश्यक है। चिन्तन में सहायक बनने वाले मनोद्रव्य (मनोवर्गणा के परमाणु स्कन्ध) से उपरंजित होकर ही चित्त मनन करता है। इस अवस्था में चित्त का नाम मन हो जाता है।

भावधारा में सहायक परमाणु स्कन्ध (द्रव्य-लेश्या) से उपरंजित चित्त भाव कहलाता है।

२८ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्तवृत्ति-(१)

मनुष्य की चित्तवृत्ति सदा समान नहीं रहती। वह बदलती रहती है। एक दिन मनुष्य खिन्न और उदासीन होता है और दूसरे दिन वह प्रसन्नचित्त हो जाता है।

मनुष्य की चित्तवृत्ति का सम्बन्ध मस्तिष्क और शरीर दोनों से है। मस्तिष्क शरीर का संचालन करने वाला है। वह भाव की उत्पत्ति का केन्द्र है। विशुद्ध और अशुद्ध भाव की उत्पत्ति का कारण केवल मस्तिष्क में ही नहीं खोजना चाहिए। उसके लिए सूक्ष्म शरीर तक जाना जरूरी है।

२६ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्तवृत्ति-(२)

सप्ताह में सात दिन होते हैं। सभी दिनों में चित्तवृत्ति समान नहीं रहती। एक दिन के चौबीस घण्टों में भी उसमें भिन्नता पाई जाती है। इसका हेतु आन्तरिक और बाहरी वातावरण है। स्वरोदय और जैविक घड़ी के आधार पर इसे समझा जा सकता है।

उपाध्याय मेघविजयजी ने चित्तवृत्ति के साथ ऋतुचक्र का वर्णन किया है।

चित्तवृत्ति	ऋतु
अहंकार उत्कर्ष की चित्तवृत्ति	वसन्त
क्रोध-तृष्णा	ग्रीष्म
प्रसन्नता	वर्षा
पवित्रता	शरद्
प्रदीप्त जठराग्नि	हेमन्त
लज्जा, पीड़ा	शिशिर

३० जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेतना के स्तर-(१)

चित्त की व्यापक अवधारणा के लिए चेतना के विभिन्न स्तरों को समझना आवश्यक है। चेतना के पांच स्तर हैं—

१. चेतना का पहला स्तर—निद्रा अथवा अचेतनावस्था—मादक वस्तुओं के सेवन से चेतना इस स्तर तक पहुच जाती है।

२. चेतना का दूसरा स्तर—जागृति।

३. चेतना का तीसरा स्तर—ऐन्द्रिक—गांजा, चरस जैसे उन्मेषक द्रव्यों के प्रयोग से यह स्तर प्राप्त होता है।

४. चेतना का चौथा स्तर—कोशिकाओं की चेतना का स्तर—यह इन्द्रियों से परे शुद्ध मानसिक चेतना का स्तर है।

५. चेतना का पांचवां स्तर—अतिचेतना का स्तर—यह इन्द्रियचेतना से परे का स्तर है।

३१ जुलाई
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेतना के स्तर-(२)

चेतना का सम्बन्ध अनेक प्रवृत्तियों के साथ है इसलिए उसके वर्गीकरण भी अनेक हैं। दूसरा वर्गीकरण इस प्रकार है—

१. संज्ञास्तरीय चेतना—चेतना का सम्बन्ध ज्ञान और संवेदना दोनों के साथ है। संज्ञा संवेदनात्मक है।

२. इन्द्रिय चेतना—वर्तमान का ज्ञान करने वाली चेतना।

३. मनस चेतना—दीर्घकालिक चेतना।

४. बुद्धि चेतना—निर्णायक चेतना।

५. प्रातिभ चेतना—योगी चेतना।

६. अतीन्द्रिय चेतना—प्रत्यक्ष चेतना।

७. निरावरण चेतना—ज्ञान के आवरण का पूर्ण विलय होने पर उत्पन्न चेतना।

०१ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेतना का परिवर्तन

चेतना-परिवर्तन के द्वारा व्यक्ति में परिवर्तन हो सकता है। व्यक्ति-परिवर्तन के द्वारा समाज में परिवर्तन किया जा सकता है।

परिवर्तन के लिए कुछ बिन्दुओं पर विमर्श करना आवश्यक है।

१. मानवीय स्वभाव में परिवर्तन कैसे किया जा सकता है?

२. दृष्टिकोण में परिवर्तन कैसे किया जा सकता है?

३. व्यवहार में परिवर्तन कैसे किया जा सकता है?

४. आचरण में परिवर्तन कैसे किया जा सकता है?

इन परिवर्तनों के उपायों का स्पष्ट बोध होने पर व्यक्ति और समाज के परिवर्तन की बात सोची जा सकती है।

०२ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृतस्राव और रसायन-(१)

नाभि मे सूर्यनाड़ी और तालुमूल में चन्द्रनाड़ी का स्थान है। सहस्रार में अमृत का प्रवाह होता है। सूर्यनाड़ी से अमृतपान करने पर जीवनी शक्ति कम होती है। चन्द्रनाड़ी से अमृतपान करने पर जीवनी शक्ति बढ़ती है। इसीलिए विपरीतकरणी में सूर्यनाड़ी को ऊपर और चन्द्रनाड़ी को नीचे किया जाता है।

विपरीतकरणी की विधि—

सिर को भूमि पर रखकर दोनों हाथों को शरीर के समकोण में फैलाएं। दोनों पैरों को श्वास भरते हुए ऊपर उठाएं। श्वास छोड़ते हुए धीरे-धीरे नीचे की ओर आएं।

०३ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृतस्राव और रसायन-(२)

खेचरी मुद्रा में कपाल और जीभ का योग होता है। इसका अभ्यास करते समय जीभ पर विलक्षण रस का सञ्चार होता है। उस रस का स्वाद भी बदलता रहता है। कभी वह कटु और कभी वह मीठा। इस रस को अमृत माना गया है।

शरीर के अनेक भाग हैं जहां अमृतरस का स्राव होता है। वैज्ञानिक शाखा के अनुसार अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के रसों का स्राव सहज रूप में होता है। हठयोग के अनुसार कुछ विशेष प्रयोग करने पर रसों का स्राव होता है। इनका तुलनात्मक अध्ययन साधना के क्षेत्र में काफी उपयोगी हो सकता है।

०४ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैविक घड़ी-(१)

मनुष्य की भावना और कार्यक्षमता में उतार-चढ़ाव पाए जाते हैं। इसका हेतु समय-चक्र है। जैविक घड़ी (Biological clock) का सिद्धान्त है—

पुरुष की शक्ति, सहिष्णुता और साहस का समय-चक्र २३ दिन का होता है। स्त्रियों के अन्तर्ज्ञान और प्रेय का समय-चक्र २८ दिन का होता है।

यह समय-चक्र हर कोशिका में पाया जाता है। स्वरोदय और जैविक घड़ी के सिद्धान्त का तुलनात्मक अध्ययन हमारे लिए बहुत उपयोगी है।

०५ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैविक घड़ी-(२)

साधना के लिए ऋतुचक्र का ज्ञान भी जरूरी है। उपाध्याय मेघविजय ने ऋतुचक्र के विषय में एक संक्षिप्त सूचना दी है। उनके अनुसार दिन-रात के चौबीस घण्टों में छः ऋतुओं का चक्र पूरा होता है।

समय	ऋतु
दिन का प्रथम प्रहर	वसन्त
मध्याह्न	ग्रीष्म
अपराह्न	प्रावृट्
संध्या	वर्षा
आधी रात	शरद
अपर रात्र	हेमन्त

०६ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(१)

मनुष्य के जीवन का स्थूल पक्ष परिस्थिति और वातावरण से प्रभावित होता है। उसके जीवन का सूक्ष्म पक्ष कर्म से प्रभावित होता है। कर्म की कुछ प्रकृतियां परस्पर विरोधी होती हैं। दोनों का विपाक एक साथ नहीं होता। एक सक्रिय होती है तो दूसरी निष्क्रिय हो जाती है।

वेद (वासनात्मक अभिलाषा) सक्रिय होता है, निर्वेद निष्क्रिय हो जाता है। निर्वेद सक्रिय होता है, वेद निष्क्रिय हो जाता है। यह ब्रह्मचर्य का महत्त्वपूर्ण सूत्र है।

मस्तिष्क की सेरेबल कॉरटेक्स, जो विचार, मनन और स्मरणशक्ति से संबद्ध है, कामवासना का नियंत्रण करती है। यह सब भावों की नियन्ता है। इसका विकास आकांक्षाओं और वृत्तियों पर नियन्त्रण करने का साधन है।

०७ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(२)

शरीर में ध्यान के अनेक केन्द्र हैं। उनमें पैर के अंगूठे का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राणधारा के पांच प्रवाह हैं। वे पांचों अंगुलियों में प्रवाहित होते हैं। अंगुष्ठ अंगुलियों में प्रधान है।

एकाग्रता के लिए इस पर ध्यान करना बहुत लाभदायक है। लेटकर अंगुष्ठ पर ध्यान करना अथवा उसे देखना ब्रह्मचर्य की साधना में सहायक बनता है। एक्युप्रेशर की चिकित्सा में भी इसका बहुत महत्त्व है।

०८ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामवासना पर नियन्त्रण-(१)

पिट्‌युइटरी का गोनाडो ट्रोफिन हॉरमोन गोनाड को प्रभावित करता है तब काम वासनाजागती है। उसको नियन्त्रित किया जा सके तो कामवासना स्वतः विसर्जित हो जाती है। उस स्राव का नियन्त्रण दर्शन केन्द्र पर ध्यान करने से होता है। जननेन्द्रिय पर बैंगनी और नीले रंग का ध्यान करने से उत्तेजना नष्ट हो जाती है। विशुद्धि केन्द्र पर हरे रंग और नीले रंग का ध्यान करने से वासना कम हो जाती है।

०९ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामवासना पर नियन्त्रण-(२)

जननेन्द्रिय कामवासना के लिए उत्तरदायी है। पर वैज्ञानिक अन्वेषणों से यह ज्ञात हुआ है कि स्त्री और पुरुष के प्रजनन केन्द्रों की उत्तेजना का नियंत्रण मेरुदण्ड के लंबर रीजन (निचले क्षेत्र) में स्थित केन्द्रों से होता है। मेरुदण्ड में अवस्थित सुषुम्ना केन्द्र से होता है। यह केन्द्र नाभि की सीध में है।

कण्ठ का कायोत्सर्ग कर विशुद्धि केन्द्र पर ध्यान केन्द्रित किया जाए—निरन्तर उसकी प्रेक्षा सवा घण्टे तक चले। तीन महीने तक प्रयोग करने पर वासना उपशान्त हो जाएगी।

१० अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामवासना पर नियन्त्रण-(३)

थायराइड ग्रन्थि का संबंध पिट्युइटरी ग्रन्थि से है। थायराइड का स्थान विशुद्धि केन्द्र के पास है। पिट्युइटरी का स्थान दर्शन केन्द्र के पास है। हाइपोथेलेमस पेप्टाइन रसायन द्वारा पिट्युइटरी पर नियन्त्रण करता है। हाइपोथेलेमस में भावनात्मक परिवर्तन होते हैं तब वह पिट्युइटरी को प्रभावित करता है। पिट्युइटरी पर नियन्त्रण करने के लिए खेचरीमुद्रा, विपरीतकरणी, सर्वाङ्गासन, मूलबन्ध, जालन्धर बन्ध और उज्जायी प्राणायाम बहुत उपयोगी हैं।

११ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर्य को प्रभावित करने वाले आन्तरिक कारण

१. खट्टे पदार्थ
२. मिर्च-मसालेदार व तले पदार्थ
३. तम्बाकू
४. मादक द्रव्य
५. तेज और उष्ण प्रकृति की दवाओं का अतिसेवन
६. लम्बे समय तक कब्ज
७. तेज धूप में अतिश्रम
८. अध्यशन
९. दिन में सोना
१०. रात्रि में देर तक जागना
११. क्रोध, चिन्ता और तनाव
१२. कामुक विचार
१३. वात प्रकोप
१४. वात-पित्त का प्रकोप
१५. लम्बे समय तक शरीर में उष्णता। उससे त्वचा का रूक्ष और श्याम होना।

१२ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रिय-विजय-(१)

ध्यान करने वाले साधक को इन्द्रिय-संयम की साधना अवश्य करनी चाहिए।

इन्द्रियां ज्ञानात्मक हैं। उनका काम है जानना और संवेदन करना। इनके साथ राग और द्वेष की धारा जुड़ी हुई है, इसलिए प्रियता और अप्रियता का भान होता रहे। अभ्यास के द्वारा प्रियता और अप्रियता के संवेदन से दूर रहना सम्भव है। यही है इन्द्रिय-संयम अथवा इन्द्रिय-विजय।

१३ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रिय-विजय-(२)

'इन्द्रियाणां मनो नाथः'—मन इन्द्रियों का नाथ है। मन इन्द्रियों द्वारा प्राप्त सामग्री का ज्ञान करता है और उसकी चंचलता बढ़ती है। मन की चंचलता को कम करने के लिए इन्द्रियों का संयम करना जरूरी है।

इन्द्रिय-संयम करने की एक विधि है। जैन योग में उसे प्रतिसंलीनता और महर्षि पतञ्जलि के योग में उसे प्रत्याहार कहते हैं। आंख को मूंद लेने पर बाहर का विषय दिखाई नहीं पड़ता। यह चक्षु की प्रतिसंलीनता है। शेष इन्द्रियों के पास आंख जैसी व्यवस्था नहीं है। उनमें खोलने और बंद करने की शक्ति नहीं है।

१४ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुर्वेद और स्वास्थ्य-(१)

स्वास्थ्य का संबंध किसी चिकित्सा पद्धति से नहीं है। उसका संबंध शारीरिक अवस्था से है। आयुर्विज्ञान में रसायन (हार्मोन्स) का जो महत्त्व है, वही महत्त्व त्रिदोष—वात, पित्त और कफ का है। इन तीनों की समावस्था आरोग्य है, विषमावस्था रोग है। इनके प्रकुपित होने पर आरोग्य बाधित होता है।

वायु का प्रकोप होने पर चिंता, उच्च रक्तचाप, भय आदि अवस्थाएं बनती हैं।

पित्त का प्रकोप होने पर क्रोध, अनिद्रा, एलर्जी आदि अवस्थाएं बनती हैं।

कफ का प्रकोप होने पर अतिनिद्रा, आसक्ति, अतिलोभ आदि अवस्थाएं बनती हैं।

१५ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुर्वेद और स्वास्थ्य-(२)

वात, पित्त और कफ की विषमता का प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य और भावात्मक स्वास्थ्य—इन सब पर होता है। इसलिए इन दोषों की तीव्रता और मंदता के हेतुओं का ज्ञान एक साधक के लिए जरूरी है।

भारतीय भोजन षड्-रस प्रधान होता है। आयुर्वेद में उन रसों के आधार पर त्रिदोष की मीमांसा की गई है—

कटु-तिक्त-कषाय	— वायु-वृद्धि
मधुर-तिक्त-कषाय	— पित्त की कमी
कटु-अम्ल-लवण	— पित्त की वृद्धि
मधुर-अम्ल-लवण	— कफ की वृद्धि
कटु-तिक्त-कषाय	— कफ की कमी

१६ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानसिक स्वास्थ्य-(१)

मन मनुष्य की प्रवृत्ति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उसका स्वास्थ्य शारीरिक स्वास्थ्य से अधिक जरूरी है। मानसिक स्वास्थ्य के लिए कुछ सूत्रों पर ध्यान देना जरूरी है—

१. अपने आपको जानो—योग्यता, अयोग्यता, सामर्थ्य, निर्बलता आदि।

२. अपने आपको स्वीकार करो—अपने आचार और व्यवहार के परिणामों को स्वीकार करो।

३. अपना यथार्थ रूप प्रस्तुत करो—सामाजिक संबंधों में अपना यथार्थ रूप प्रस्तुत करो।

१७ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानसिक स्वास्थ्य-(२)

मन सूक्ष्म है। वह हमें दिखाई नहीं देता। उसके स्वास्थ्य और अस्वास्थ्य को भी प्रत्यक्षतः नहीं जान पाते, किन्तु लक्षणों से पता चल जाता है। इस विषय में एक मार्मिक दोहा उपलब्ध है—

भय चिन्ता आलस अमन, सुख दुःख हेत अहेत।
मन महीप के आचरण, दृग दीवान कहि देत।।

दूसरों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, आत्म-विश्वास, उत्साह, आशावादी दृष्टिकोण, समस्याओं के आने पर क्षुब्ध न होना—ये सब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षण हैं।

१८ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानसिक स्वास्थ्य-(३)

मानसिक स्वास्थ्य के लिए अक्षोभ, अनुद्वेग और अनुत्सुकता—इन तीन बातों पर ध्यान देना जरूरी है। अति उत्सुकता कण्ठमणि (Thyroid) के स्राव को प्रभावित करती है। उसका मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत बड़ा असर होता है।

किसी घटना या परिस्थिति से उत्पन्न उद्वेग मन को अशान्त करता है।

तालाब में ढेला फेंका, एक लहर पैदा हो गई—वैसे ही मन के प्रतिकूल कोई बात हुई, कोई कार्य हुआ, मन विचलित हो जाता है। फलतः मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है।

१९ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वास्थ्य और आहार-(१)

जो व्यक्ति साधना करना चाहे, उसके लिए जरूरी है स्वास्थ्य। स्वास्थ्य के लिए जरूरी है खाद्य-संयम अथवा उपवास। यह तपस्या का एक प्रकार है जिससे कर्म की निर्जरा होती है। यह धार्मिक दृष्टिकोण है। आरोग्य का दृष्टिकोण यह है कि लंघन करने से शरीर को विजातीय तत्त्वों की सफाई करने का अवसर मिल जाता है। जो व्यक्ति खाते रहते हैं वे अपने शरीर को सफाई करने का अवसर नहीं देते। गंदगी भीतर रहती है, वह बीमारी पैदा करती है।

२० अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वास्थ्य और आहार-(२)

स्वस्थ व्यक्ति ध्यान की गहराई में जा सकता है। स्वास्थ्य और आहार का गहरा संबंध है। आहार का संबंध ध्यान के साथ भी है। इसलिए ध्यान करने वाले व्यक्ति को आहार के विषय में जानना जरूरी है।

शिशिर ऋतु—माघ और फाल्गुन—तिक्त, कटु, कषाययुक्त वातवर्धक वस्तु वर्जित।

वसंत ऋतु—चैत्र और वैशाख—स्निग्ध और अम्लीय आहार वर्जित।

ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ और आषाढ़—अम्लीय व कटु पदार्थ वर्जित।

वर्षा ऋतु—श्रावण और भाद्रपद—दिन में शयन और धूप में बैठना वर्जित।

शरद् ऋतु—आश्विन और कार्तिक—क्षारीय पदार्थ और महीशयन वर्जित।

हेमन्त ऋतु—मार्गशीर्ष और पौष—घृत व स्निग्ध पदार्थ लाभप्रद।

२१ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या है अकेलापन?

एक व्यक्ति जंगल में चला गया। गहरे जंगल में एक झोंपड़ी। वहां एक तपस्वी बैठा था। वह झोंपड़ी के भीतर गया। देखा, कोई तपस्वी साधना कर रहा है। नमस्कार कर बैठ गया।

तपस्वी ने पूछा—जंगल में क्यों आए हो?

आगन्तुक बोला—बाबा! घर में लड़ाई बहुत होती है इसीलिए घर को छोड़ यहां आया हूं।

तपस्वी—लड़ने-झगड़ने की वृत्ति छोड़कर आया है या नहीं?

आगन्तुक—वह तो नहीं छूटती।

तपस्वी—वापस घर चले जाओ। यहां रहकर जंगल को बदनाम करोगे। ठीक कहा है —

रागद्वेषावनिर्जित्य किमरण्ये करिष्यसि?
रागद्वेषौविनिर्जित्य किमरण्ये करिष्यसि?

२२ अगस्त
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य अकेला कैसे?

मैं अकेला हूं—यह स्थूल कल्पना है। मनुष्य का मस्तिष्क अनेक विचारों, कल्पनाओं, योजनाओं का उद्गम स्रोत है, फिर वह अकेला कैसे हो सकता है?

अकेला वही हो सकता है जो अप्रभावित है। मनुष्य सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित है, फिर वह अकेला कैसे हो सकता है?

मनुष्य भूमण्डल की असंख्य तरंगों, आकाश के असंख्य विकिरणों से प्रभावित है, फिर वह अकेला कैसे हो सकता है?

वास्तव में अकेला वही हो सकता है जो अप्रभावित रहने के कवच का निर्माण करना जानता है।

२३ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरल नहीं है अकेला रहना

अकेला रहना बहुत कठिन कार्य है। चेतना के स्तर पर जीने वाला व्यक्ति अकेला रह सकता है। उसके लिए साधना बहुत जरूरी है।

एक शिशु जन्म लेता है तब वह परिवार से घिरा होता है। उसके सामने कोई एक नहीं होता, समुदाय होता है। वह उसी क्षण से समुदाय के जीवन में ढलना शुरू हो जाता है। अकेला डरता है, अकेले में उसका मन नहीं लगता। इन स्थितियों का निर्माण शैशवकाल से ही हो जाता है। फिर अकेले रहना सरल कैसे हो सकता है?

२४ अगस्त

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अकेला रहने की कला

क्या तुम अकेला रहना जानते हो? यदि जानते हो तो साधुवाद।

जो अकेला रहना नहीं जानता वह शांतिपूर्ण जीवन नहीं जी सकता।

समूह में रहकर भी अकेलेपन को जीया जा सकता है। अध्यात्म की यह एक जीवनकला है।

जो व्यक्ति एकत्व भावना से अपने चित्त को भावित कर लेता है, वह समूह में रहकर भी अकेलेपन की अनुभूति कर सकता है।

२५ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाग्य और पवित्रता

पुरुषार्थ और भाग्य एक विवाद का विषय है। पुरुषार्थ बड़ा या भाग्य? इसकी चर्चा प्राचीन साहित्य के पृष्ठों में अंकित है।

इसका बहुत सरल समाधान है—अतीत का पुरुषार्थ वर्तमान का भाग्य और वर्तमान का पुरुषार्थ भविष्य का भाग्य।

तुम्हारा भाग्य वही है जो तुमने अपने सूक्ष्म शरीर या मन पर अंकित किया है।

पूर्व कर्म या पूर्व विचार व्यक्त होते हैं, वही भाग्य है।

पवित्र विचारों की सृष्टि अच्छे भाग्य की सृष्टि और अपवित्र विचारों की सृष्टि बुरे भाग्य की सृष्टि है। इसलिए विचारों की पवित्रता जरूरी है।

२६ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कैसे होता है भाग्य का परिवर्तन?

जो स्थूल जगत में व्यक्त होता है वह पहले सूक्ष्म जगत में सृष्ट होता है। सूक्ष्म जगत में वही सृष्ट होता है जो चिन्तन और आचरण से फलित होता है।

भाग्य-परिवर्तन के लिए मानसिक चित्र का निर्माण बहुत आवश्यक है। तुम जो बनना चाहो, उसकी कल्पना करो। वैसे मानसिक चित्र का निर्माण करो, उस पर एकाग्र बनो।

कल्पना, चित्र-निर्माण और एकाग्रता—भाग्य परिवर्तन के बहुत बड़े साधन हैं।

२७ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जागृत अवस्था

योग विद्या के अनुसार तीन शक्तिकेन्द्र हैं। इनमें शक्तिकेन्द्र (मूलाधार) प्रथम है। यह शरीर की ऊर्जा का आधार है, स्रोत है, मनुष्य के विकास का पहला स्थान है और पशु-जगत के विकास का अंतिम सोपान है। प्रत्येक चैतन्यकेन्द्र की दो अवस्थाएं होती हैं—सुप्त और जागृत। सुप्त अवस्था में वह निष्क्रिय होता है और जागृत अवस्था में सक्रिय। विकास के परिणाम जागृत अवस्था में ही सामने आते हैं।

२८ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाद और अप्रमाद

चेतना की अभिव्यक्ति का मुख्य स्तर है मस्तिष्क। बाह्य और आन्तरिक स्थिति से प्रभावित मस्तिष्क सदा एक जैसा कार्य नहीं करता। उसकी कार्यप्रणाली बदलती रहती है। उस परिवर्तन के आधार पर चेतना की अभिव्यक्ति की अनेक अवस्थाएं हो जाती हैं।

१. चेतना की अभिव्यक्ति की पहली अवस्था है सुप्तावस्था। मादक वस्तुओं के सेवन से चेतना की यह अवस्था बनती है।

२. चेतना की अभिव्यक्ति की दूसरी अवस्था है जागृत अवस्था। अप्रमाद की साधना करने वाला जागृति का अनुभव करता है।

२६ अगस्त
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्छाशक्ति

१. इच्छाशक्ति सूक्ष्म लोक में कम्पन उत्पन्न कर हमारी इच्छानुसार उसका आकर्षण-प्रत्याकर्षण कर सकती है।

२. योग का पहला सूत्र है—जैसा चाहो वैसा बनो।

३. योग का पहला पाठ है—विचारों पर अधिकार करो।

४. इच्छाशक्ति भावों से उत्पन्न होती है।

५. भावों को इच्छाशक्ति के रूप में बदलने का साधन है—स्वसम्मोहन।

६. इच्छाशक्ति का विकास त्राटक और योगनिद्रा द्वारा होता है।

३० अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सापेक्ष समाधान

समाज के बिना व्यक्ति जी नहीं सकता फिर वह अकेला कैसे रह सकता है? इस समस्या का समाधान बाह्य जगत और अन्तर्जगत के आधार पर किया जा सकता है।

बाह्य जगत में व्यक्ति अकेला नहीं रह सकता। उसमें सामाजिक जीवन जीने की अनिवार्यता है।

अन्तर्जगत में व्यक्ति अकेला हो सकता है, रह सकता है। अकेलेपन के बिना अन्तर्जगत की यात्रा नहीं हो सकती।

३१ अगस्त
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहला पृष्ठ

तुम बहुत पढ़ते हो, अनेक पुस्तकें पढ़ी हैं। हमारा प्रश्न है—एक पुस्तक पढ़ी या नहीं? यदि पढ़ी है तो तुम्हें साधुवाद देना चाहता हूं। यदि नहीं पढ़ी है तो कहना चाहूंगा, उसका पहला पृष्ठ अवश्य पढ़ो।

पुस्तक का नाम है जीवन की पोथी। उसका पहला पृष्ठ अवश्य पढ़ो। उसमें लिखा है—मनुष्य! तुझे जो मिला है वह दुनिया के किसी भी प्राणी को नहीं मिला है इसलिए उसका मूल्यांकन करो।

०१ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुम क्या चाहते हो?

एक प्रश्न अनेक लोगों ने पूछा—तुम क्या चाहते हो? कुछ होना चाहते हो या कुछ पाना चाहते हो?

साधक को भी अपने आप से प्रश्न पूछना चाहिए कि मैं कुछ बनना चाहता हूं या कुछ पाना चाहता हूं?

जो कुछ बनना चाहता है वह अधिक से अधिक आत्मा की सन्निधि में रहने का अभ्यास करे। जो कुछ पाना चाहता है वह प्राण की उपासना में लगे। वह बड़े लक्ष्य को छोड़कर छोटे में उलझ जाएगा।

०२ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पीड़ा और संवेदना

पीड़ा मस्तिष्क के एक विशिष्ट कक्ष द्वारा अनुभव की जाती है।

१. एक स्थिति यह है कि मनुष्य के पीड़ा होती है, उसे वह सहन नहीं कर सकता।

२. दूसरी स्थिति यह है कि मनुष्य के पीड़ा होती है, उसे वह सहन कर लेता है।

३. तीसरी स्थिति यह है कि मनुष्य पीड़ा का अनुभव ही न करे।

पीड़ा की संवेदना को मस्तिष्क के विशिष्ट कक्ष तक पहुंचने से रोका जा सकता है। इसके लिए दीर्घकालीन अभ्यास आवश्यक है।

०३ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवसाद का उपचार

अवसाद (Depression) की अवस्था में शामक औषधियों का प्रयोग किया जाता है। उनका कार्य है मस्तिष्कीय रसायन को सक्रिय करना, एण्डोरफिन पैदा करना। उससे एक बार अवसाद के लक्षण कम हो जाते हैं किन्तु कुछ समय बाद फिर प्रकट हो जाते हैं। जप, ध्यान और अनुप्रेक्षा के प्रयोगों द्वारा अवसाद से मुक्ति पाई जा सकती है।

०४ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वार बंद न हो

धार्मिक लोग सूक्ष्म तत्त्व के नियम की खोज में आगे बढ़ सकते हैं किन्तु उनके पैर बंधे हुए हैं। पैरों को एक मस्तिष्कीय अवधारणा ने बांध रखा है।

अवधारणा यह है—पूर्वजों ने जो सत्य खोजा उससे आगे खोज का कोई अवकाश नहीं है। इसलिए वे अपने पूर्वजों की वाणी से बंधे हुए हैं। उससे आगे शोध करने के लिए उद्यत नहीं हैं।

हम भूल जाते हैं—द्रव्य के अनन्त पर्याय हैं। कोई भी सब पर्यायों का प्रतिपादन नहीं कर सकता। फिर सत्य की खोज का द्वार कैसे बंद होगा?

०५ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतीन्द्रिय चेतना

अतीन्द्रिय ज्ञान इन्द्रियों से निरपेक्ष होता है। मनुष्य इन्द्रियों पर इतना निर्भर हो गया है कि उसकी अतीन्द्रिय चेतना दबी हुई-सी प्रतीत होती है।

विचार और संवेदन का जितना नियंत्रण, उतना अतीन्द्रिय चेतना का विकास।

स्थूल शरीर और स्थूल मन को निष्क्रिय तथा सूक्ष्म शरीर और सूक्ष्म मन को सक्रिय करने का विकास अतीन्द्रिय चेतना के विकास का अभ्यास है।

०६ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मौलिक समस्याएं

हमारी मूल समस्याएं दो हैं—

१. चंचलता

२. रागात्मक और द्वेषात्मक अभिनिवेश

चंचलता मन की प्रकृति है। मलिनता और निर्मलता—ये मन के आरोपित गुण हैं।

भाव अशुद्ध—मन मलिन।

रागात्मक अभिनिवेश—भाव अशुद्ध।

द्वेषात्मक अभिनिवेश—भाव अशुद्ध।

राग और द्वेष उपशान्त—भाव शुद्ध।

०७ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋतुचक्र

ध्यान की साधना करने वाले को समय तथा समय में होने वाले प्रभावों का बोध होना जरूरी है।

वर्ष में दो अयन होते हैं—

१. दक्षिणायन—तीन ऋतुओं का चक्र। (वर्षा, शरद्, हेमन्त)

२. उत्तरायण—तीन ऋतुओं का चक्र। (शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म)

दक्षिणायन की तीन ऋतुओं में चन्द्रमा बलवान होता है। इस समय खट्टे, नमकीन और मीठे रस क्रमशः बलवान होते हैं। उत्तरोत्तर उनका बल बढ़ता है।

उत्तरायण की तीन ऋतुओं में सूर्य बलवान होता है। इस समय कड़वा, कषैला और कर्कश रस क्रमशः बलवान होता है। उत्तरोत्तर उनका बल घटता है।

साधक के लिए इस ऋतुचक्र का उपयोग बहुत जरूरी है।

०८ सितम्बर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिष्कार भीतर का

प्रकम्पनों के बीच अप्रकम्प की खोज ध्यान का प्रमुख उद्देश्य है। कर्म शरीर में निरन्तर प्रकम्पन हो रहे हैं। वे तरंग के रूप में बाहर आते हैं और मनुष्य की प्रवृत्तियों को प्रभावित करते हैं।

यदि कोई व्यक्ति बाहर को शुद्ध करना चाहता है तो उसे भीतरी प्रकम्पनों को समझना होगा। भीतरी प्रकम्पनों का परिष्कार किए बिना बाह्य प्रवृत्ति का परिष्कार नहीं किया जा सकता।

०६ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अदृश्य दृश्य बनता है

विकार दिखाई नहीं देते। ध्यान कराने वाला कहता है—उन्हें साक्षीभाव से देखो। जो अदृश्य हैं उन्हें वह कैसे देखेगा? किन्तु योग के आचार्यों ने उन्हें देखने का उपाय बतलाया है—

१. मन में विकार जागता है तब श्वास अस्वाभाविक हो जाता है। उस पर ध्यान केन्द्रित करो।

२. शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग में सूक्ष्म स्तर पर प्रतिक्रिया शुरू हो जाती है। उस पर ध्यान केन्द्रित करो। अदृश्य दृश्य बन जाएगा।

१० सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधना के आलम्बन

साधना में अनेक आलम्बनों का प्रयोग किया जाता है। एक सौंठ के गांठिए से कोई पंसारी नहीं होता, वैसे ही एक आलम्बन से कोई साधक नहीं बनता। इसका हेतु स्पष्ट है—कर्म के संस्कार नाना प्रकार के होते हैं। उनको क्षीण करने के उपाय भी नाना प्रकार के होने चाहिए। इसीलिए योग के आचार्यों ने अष्टांग योग, षडंग योग, द्वादशविध तप आदि अनेक आलम्बन बतलाए हैं।

११ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुद्धि और निरोध

आलम्बन का अभ्यास परिपक्व होता है, उस स्थिति में साधक निरालम्बन की भूमिका में पहुंच जाता है। यह संवर अथवा निरोध की भूमिका है। केवल पूर्व संस्कारों का निर्जरण करने से साधना की प्रगति नहीं होती। अतीतकालीन कर्म परमाणुओं का ग्रहण न हो तभी चित्तशुद्धि का विकास होता है। साधना के क्षेत्र में निर्जरण और संवरण दोनों का प्रयोग अनिवार्य है।

१२ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकर्षण : ध्येय के प्रति

एक साधक ध्यान करने बैठता है। एक विषय पर एकाग्र होना चाहता है पर हो नहीं पाता। कुछ साधक इस स्थिति में परेशानी का अनुभव करते हैं। वे ध्यान करना छोड़ देते हैं। इस समस्या का क्या कोई समाधान है? यदि नहीं है तो ध्यान का विकास संभव नहीं होगा।

इस समस्या का समाधान खोजें तो आकर्षण के विषय पर ध्यान केन्द्रित करना होगा कि ध्येय के प्रति उतना आकर्षण नहीं है जितना पदार्थ के प्रति अथवा इन्द्रिय-विषयों के प्रति है। हर साधक को इस सचाई का अनुभव करना चाहिए। इस समस्या का समाधान है—ध्येय के प्रति गहरा आकर्षण।

१३ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान और ध्यान

ज्ञान और ध्यान दोनों एक ही हैं और दोनों भिन्न भी हैं। ध्यान ज्ञानात्मक है किन्तु सब ज्ञान ध्यान नहीं है—

१. चल-ज्ञान ज्ञान, स्थिर-ज्ञान ध्यान।

२. प्रिय- अप्रिय संवेदन से युक्त क्षण-ज्ञान।
प्रिय-अप्रिय संवेदन से मुक्त क्षण-ध्यान।

३. केवल-ज्ञान ज्ञान, ज्ञाता-द्रष्टा भाव-ध्यान।

१४ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति कहां है?

सुप्त शक्ति शरीर में कहां है? इसकी खोज आवश्यक है। वंशानुक्रम विज्ञानी सुषुप्त शक्ति की खोज D.N.A. में कर रहे हैं। उनके अनुसार वह जीवन का नियंता अणु है। योग के आचार्यों ने इस शक्ति की खोज की है। उनके अनुसार शक्ति का भण्डार मूलाधार (शक्तिकेन्द्र) है। प्राणसंचार प्रणाली के द्वारा शक्ति भण्डार के शक्तिकणों को पूरे शरीर में पहुंचाया जा सकता है।

१५ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति के नियम

शक्ति के व्यय और विकास दोनों के नियमों को जानना साधक के लिए जरूरी है। शरीर, मस्तिष्क और स्वचालित नाड़ी संस्थान (Autonomic Nervous System)—इन तीनों की प्रवृत्ति द्वारा शक्ति का व्यय होता है। इसीलिए इन तीनों को विश्राम देना जरूरी है। इनकी प्रवृत्ति के लिए कार्य नहीं हो सकता, इसलिए प्रवृत्ति को रोका नहीं जा सकता। अति प्रवृत्ति न हो, शक्ति का अति व्यय न हो, इस दिशा में साधक को जागरूक रहना जरूरी है।

१६ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाधि के नियम

बाह्य जगत से संबंध इन्द्रियों द्वारा होता है। उनमें त्वचा, नेत्र और कान—ये प्रमुख हैं। त्वचा संवेदनशील न हों, नेत्र बंद हों, कान बंद हो तो तत्काल समाधि दशा प्राप्त हो सकती है। यही सर्वेन्द्रिय संयम मुद्रा है।

इन्द्रियों का बाह्य जगत से संबंध विच्छेद कर ध्यानावस्था में बैठना। त्राटक करना। हिप्नोटिज्म और मेस्मेरिज्म जानने वाला अपनी शक्ति से दूसरों को समाधिस्थ कर सकता है। चित्त शुद्धि का यह सर्वोत्तम मार्ग है। देखने-सुनने की वृत्तियों को शिक्षित करो। इच्छाशक्ति को शिक्षित करो। एकाग्रता प्राप्त करो। प्रिय वस्तु पर मन टिकाओ। बाहर मत जाने दो।

१७ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाधि की यात्रा

प्रेक्षाध्यान की साधना समाधि के लिए की जाती है। समाधि के तीन विघ्न हैं—

१. व्याधि—शारीरिक रोग और समस्याएं

२. आधि—मानसिक रोग और समस्याएं

३. उपाधि—भावनात्मक रोग और समस्याएं

ध्यान की साधना के द्वारा व्यक्ति इन तीनों स्थितियों से परे जाकर समाधि का अनुभव करता है।

इन तीनों में सबसे बड़ा विघ्न है उपाधि। प्रेक्षाध्यान उसके समाधान पर केन्द्रित है।

१८ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपाधि की चिकित्सा

प्रेक्षाध्यान का मुख्य उद्देश्य शारीरिक रोग की चिकित्सा नहीं है। ध्यान से शारीरिक रोग मिटते हैं। यह उसका प्रासंगिक फल है। कुछ लोग शारीरिक रोग मिटाने के लिए प्रेक्षाध्यान का प्रयोग करते हैं। उन्हें नहीं भूलना चाहिए कि भावात्मक संतुलन के बिना शारीरिक रोगों से मुक्ति पाना भी सरल नहीं है। इसलिए ध्यान करने वाले व्यक्ति का मुख्य लक्ष्य भावात्मक संतुलन होना चाहिए।

१६ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्रिया का मूल्य

ध्यान शरीर, वाणी और मन की प्रवृत्ति को कम करने वाला प्रयोग है, अक्रिया का प्रयोग है। जेठा भाई ने एक बार मुझे कहा 'पढ़ता हूं, लिखता हूं। यह मेरी क्रियाशीलता है। ध्यान में बैठूं तो निकम्मा हो जाऊंगा।' यह चिन्तन उस भूमिका का है जिस अवस्था में अक्रिया का मूल्य नहीं आंका जाता।

सत्य का साक्षात्कार वही व्यक्ति कर सकता है जो अक्रिया का मूल्य जानता है। क्रिया सामाजिक अथवा व्यावहारिक उपयोगिता है। वह इन्द्रियातीत चेतना के विकास में एक बाधा है। अकर्म—वीर्य की साधना करने वाला ही अतीन्द्रियज्ञानी हो सकता है।

२० सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवल सुनो

येन हुई ने पूछा—मन का संयम करने के लिए क्या करूं?

कन्फ्यूशियस ने कहा—केवल कानों से सुनो। कान से सुना जाता है किन्तु उसके साथ प्रियता और अप्रियता का संबंध नहीं होता। कान के साथ मन जुड़ता है तभी प्रियता और अप्रियता का संबंध होता है।

मन का संयम तभी होता है जब इन्द्रिय के साथ मन का सम्पर्क न हो।

२१ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्वास है या नहीं?

१. चित्त समाधि में?

२. शांतिपूर्ण सहअस्तित्व में?

३. सेवा और सहयोग में?

४. साधार्मिक वात्सल्य में?

५. कटु व्यवहार के प्रति मृदु व्यवहार करने में?

६. उत्तेजना के प्रति शांतिपूर्ण व्यवहार में?

७. आवेश और कटु व्यवहार की आदत को बदलने का लक्ष्य है या नहीं?

यदि है तो उसके लिए प्रयत्न करते हैं या नहीं? यदि करते हैं तो अच्छी बात है और नहीं करते हैं तो अब प्रारम्भ करें।

२२ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संचालक कौन?

हमारा व्यवहार कौन चला रहा है? इस पर गंभीर चिन्तन होना चाहिए। यदि कोई बाहरी शक्ति चला रही है तो उससे सम्पर्क साधें और अनुरोध करें कि वह व्यवहार को आत्मोन्मुखी बनाएं।

यदि कोई आंतरिक शक्ति व्यवहार का संचालन कर रही है तो उस पर ध्यान केन्द्रित करें, उसका परिष्कार करें। भीतर के परिष्कार का प्रतिबिम्ब है—व्यवहार का परिष्कार। इसके लिए आवश्यक है—आत्मनिरीक्षण।

२३ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुत्सुकता

अनुत्सुकता साधना का शक्तिशाली प्रयोग है। उत्सुकता बढ़ती है। कण्ठ की संवेदना तीव्र हो जाती है। कण्ठमणि (थायराइड) का स्राव तीव्र हो जाता है।

साधना के प्रति आकर्षण होने का प्रथम प्रयोग है अनुत्सुकता का विकास।

जितनी उत्सुकता उतनी मन की चंचलता और उतना ही शक्ति का व्यय। उत्सुकता के क्षणों में मन की क्रिया बहुत बढ़ जाती है। अभिलषित वस्तु को देखने या पाने की उत्कण्ठा तीव्र हो जाती है। उस तीव्रता से शरीर और मन दोनों असंतुलित हो जाते हैं।

२४ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाध्यान की तीन भूमिकाएं

१. अनुशासन

२. संयम

३. संवर

अनुशासन की भूमिका में पर-निर्देश प्रधान होता है। दूसरे के निर्देशानुसार प्रयोग किया जाता है।

अनुशासन की भूमिका में दस-दस दिन के दो शिविर अपेक्षित हैं।

अनुशासन की भूमिका के प्रयोग—

१. कायोत्सर्ग — अभ्यासकाल ३० मिनिट

२. दीर्घश्वास — अभ्यासकाल ३० मिनिट

३. समवृत्तिश्वास — अभ्यासकाल ३० मिनिट

४. अन्तर्यात्रा — अभ्यासकाल २० मिनिट

५. ज्योतिकेन्द्र प्रेक्षा — अभ्यासकाल १० मिनिट

२५ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुशासन की भूमिका के फलित

कायिक अनुशासन—कायोत्सर्ग के अभ्यास से कायिक अनुशासन सिद्ध होता है। आसन सिद्धि हो जाती है। आधा घण्टा अथवा एक घण्टा तक स्थिर बैठने की स्थिति सध जाती है।

वाचिक अनुशासन—दीर्घश्वास के अभ्यास से मौन की योग्यता विकसित हो जाती है। छोटा श्वास मन को चंचल बनाता है। मानसिक चंचलता से मौन भंग हो जाता है।

मानसिक अनुशासन—श्वास और अन्तर्यात्रा के प्रयोग से मानसिक एकाग्रता बढ़ती है।

इन सबकी सिद्धि के लिए दीर्घकालिक अभ्यास जरूरी है, इसलिए निर्दिष्ट अवधि का अभ्यास करें।

२६ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयम

संयम की भूमिका में स्व-निर्देश प्रधान होता है। स्व-संकल्प के आधार पर प्रयोग किया जाता है।

संयम की भूमिका में दस-दस दिन के दो शिविर अपेक्षित हैं।

संयम की भूमिका के प्रयोग—

१. कायोत्सर्ग	— अभ्यासकाल १० मिनिट
२. दीर्घश्वास	— अभ्यासकाल १० मिनिट
३. समवृत्तिश्वास	— अभ्यासकाल १० मिनिट
४. शरीरप्रेक्षा	— अभ्यासकाल ३० मिनिट
५. अनित्य अनुप्रेक्षा	— अभ्यासकाल २० मिनिट
६. सहिष्णुता की अनुप्रेक्षा	— अभ्यासकाल २० मिनिट

२७ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयम की भूमिका के फलित

कायिक संयम—आवेश की स्थिति में हाथ का संयम, पैर का संयम, शरीर की विशिष्ट स्थिरता।

वाचिक संयम—

१. मृदु वचन का प्रयोग

२. सत्य वचन का प्रयोग

मानसिक संयम—५ मिनिट से १५ मिनिट तक एकाग्रता का अभ्यास।

इन सबकी सिद्धि के लिए दीर्घकालिक अभ्यास जरूरी है, इसलिए निर्दिष्ट अवधि का अभ्यास करें।

२८ सितम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवर

संवर की भूमिका में आन्तरिक शुद्धि और अनुभूति प्रधान होती है।

संवर की भूमिका में दस-दस दिन के दो शिविर अपेक्षित हैं। संवर की भूमिका के प्रयोग—

१. कायोत्सर्ग — अभ्यासकाल ३० मिनिट
२. दीर्घश्वास — अभ्यासकाल १० मिनिट
३. समवृत्तिश्वास — अभ्यासकाल १० मिनिट
४. चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा — अभ्यासकाल ४५ मिनिट
५. लेश्याध्यान — अभ्यासकाल ४५ मिनिट

२९ सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवर की भूमिका के फलित

कायिक संवर—एक घंटा तक आसन अथवा कायोत्सर्ग में पूर्ण स्थिरता।

वाचिक संवर—कण्ठ का कायोत्सर्ग, पूर्ण मौन।

मानसिक संवर—निर्विकल्प अथवा निर्विचार अवस्था। मन से परे जाने की अवस्था।

इन सबकी सिद्धि के लिए दीर्घकालिक अभ्यास जरूरी है, इसलिए निर्दिष्ट अवधि का अभ्यास करें।

३० सितम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुरक्षा कवच-(१)

बाहरी आघातों, प्रत्याघातों, अनिष्ट विचारों से अपनी सुरक्षा के लिए मंत्र का कवच किया जाता है। वैसे ही प्राण-ऊर्जा का भी कवच बनाया जा सकता है।

दर्शन केन्द्र पर ध्यान करें। 'ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं' का जप करें। बाल सूर्य को सामने देखें, उसकी रश्मियां दर्शन केन्द्र पर आ रही हैं। ये रश्मियां शरीर के प्रत्येक अवयव को प्राण-ऊर्जा से परिपूरित कर रही हैं। मंत्र का जप निरन्तर चलता रहे। शरीर के चारों ओर अभेद्य कवच का निर्माण हो रहा है। शरीर के चारों ओर तीन वलयों का निर्माण करें।

०१ अक्टूबर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुरक्षा कवच-(२)

यह जगत नाना रुचि, नाना विचार और नाना प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों से संकुल है। बहुत व्यक्ति अच्छे होते हैं। कुछ निषेधात्मक चिंतन वाले होते हैं। वे दूसरे के अनिष्ट की बात सोच सकते हैं और अनिष्ट बात कर भी सकते हैं। इस स्थिति में अपनी सुरक्षा के लिए सुरक्षा कवच का प्रयोग बहुत आवश्यक है।

१. सिद्धासन, पद्मासन या वज्रासन की मुद्रा में बैठें।

२. मेरुदण्ड सीधा रहे।

३. दोनों हथेलियों को तैजस केन्द्र पर स्थापित कर दीर्घश्वास लें और श्वास संयम कर भावना करें—मेरे शरीर के चारों ओर प्राण का शक्तिशाली वलय बन रहा है। वह अपनी शक्ति से बाहर से आने वाले दुष्प्रभाव को रोक रहा है। मैं उस आभावलय के बीच सुरक्षित हूं।

४. अपनी सुरक्षा का मानसिक चित्र बनाएं।

५. फिर श्वास का रेचन करें।

६. इक्कीस मिनिट तक यह प्रयोग करें।

इक्कीस दिन के प्रयोग से यह रक्षा कवच सिद्ध हो सकता है।

०२ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्यात्रा

ध्यान की मुद्रा में बैठकर दीर्घश्वास का प्रयोग और उसके साथ श्वास-संयम (कुंभक) का प्रयोग किया जाए। चित्त की यात्रा पृष्ठरज्जु के निचले सिरे से मस्तिष्क के चोटी के भाग तक की जाए। इससे सुषुम्ना में चित्त का प्रवेश होता है। इस अवस्था में उसकी बहिर्मुखता समाप्त होती है। उसका अन्तर्मुखता में प्रवेश हो जाता है। बार-बार उसका प्रयोग करने पर विद्युत के समान दीर्घाकार तेज दिखाई देने लगता है।

०३ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुषुम्ना जागरण

ध्यान और एकाग्रता के लिए सुषुम्ना की जागृत अवस्था बहुत अधिक उपयोगी है। नाक के दोनों छिद्रों के बीच नासिका अस्थि सुषुम्ना द्वार है। वह प्राणवायु को सहस्रार तक पहुंचाने का मार्ग है। श्वास लेते समय जागरूक रहना जरूरी है।

श्वास नासिका के मध्यद्वार से टकराता हुआ जाए—यही जागरूकता का मुख्य बिन्दु है। श्वास वापस आए तब उसे नासिका-मूल—दर्शन केन्द्र के निम्न भाग में रोकें। इस प्रयोग से सुषुम्ना का जागरण सरलता से हो जाता है।

०४ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास-संयम-(१)

श्वास का पहला प्रयोग—इसमें पूरण, रेचन और श्वास-संयम (कुंभक) ये तीनों किए जाते हैं।

श्वास का दूसरा प्रयोग—इसमें पूरण और रेचन का अभ्यास किया जाता है।

श्वास का तीसरा प्रयोग—इसमें पूरण और रेचन पर ध्यान दिए बिना केवल श्वास-संयम का अभ्यास किया जाता है।

केवल श्वास-संयम का प्रयोग आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है।

०५ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्वास-संयम-(२)

सुखासन, वज्रासन अथवा पद्मासन की मुद्रा। कायोत्सर्ग, पृष्ठरज्जु बिल्कुल सीधा। श्वास का रेचन करें। रेचन के बाद श्वास-संयम (बाह्य कुम्भक) करें। इस अवस्था में एकाग्रता सघन हो जाती है।

यह प्रयोग दीर्घश्वास प्रेक्षा का अभ्यास परिपक्व होने के बाद किया जाना चाहिए। इसमें श्वास संयम की मात्रा का उत्तरोत्तर विकास करना आवश्यक है। प्रारम्भ में पांच सैकण्ड, कुछ समय बाद दस सैकण्ड और अंत में एक मिनिट तक हो जाए तो यह एकाग्रता की साधना का बहुत बड़ा प्रयोग हो सकता है।

०६ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लयबद्ध दीर्घश्वास

श्वास के प्रयोगों में लयबद्ध दीर्घश्वास का प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे एकाग्रता सघन होती है। श्वास की लय बन जाती है। आन्तरिक विकास के लिए यह बहुत जरूरी है।

कायोत्सर्ग की मुद्रा में बैठकर श्वास का पूरण, रेचन, अन्तःश्वास-संयम और बाह्यश्वास- संयम चारों किए जाते हैं। इन चारों के प्रयोग में पहली बार जितना समय लगे, दूसरी बार भी उतना ही समय लगे। प्रत्येक आवृत्ति में उतना ही समय लगे।

पूरण	— ८ सैकण्ड
अन्तःश्वास-संयम	— ८ सैकण्ड
रेचन	— ८ सैकण्ड
बाह्यश्वास-संयम	— ८ सैकण्ड

अभ्यास का कालमान सुविधा के अनुसार बढ़ाया जा सकता है।

०७ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीर्घश्वास

दीर्घश्वास प्रयत्नपूर्वक किया जाता है। संकल्प के साथ श्वास को लम्बा करें।

श्वास की सामान्य संख्या एक मिनिट में १५ होती है। उस संख्या को घटाते-घटाते एक मिनिट में एक श्वास का अभ्यास करें। श्वास के आगमन निर्गमन पर ध्यान केन्द्रित करें।

यह प्रयोग एकाग्रता और जीवनी शक्ति के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है। अन्तश्चक्षु (Third eye) के उद्घाटन के लिए भी इसका महत्त्व कम नहीं है।

०८ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीर्घश्वास-(१)

साधारणतया ४ सैकण्ड में एक श्वास लेते हैं।

१. तीन सैकण्ड में श्वास लेना, तीन सैकण्ड में श्वास छोड़ना। एक मिनिट में दस श्वास २. तीन सैकण्ड में श्वास लेना, तीन सैकण्ड अन्तः- कुम्भक, तीन सैकण्ड रेचन, तीन सैकण्ड बाह्य कुम्भक। एक मिनिट में पांच श्वास।

३. पांच सैकण्ड में श्वास लेना, पांच सैकण्ड में श्वास छोड़ना। एक मिनिट में छह श्वास। ४. पांच सैकण्ड श्वास लेना, पांच सैकण्ड अन्तः-कुम्भक, पांच सैकण्ड रेचन, पांच सैकण्ड बाह्य कुम्भक। एक मिनिट में तीन श्वास।

५. दस सैकण्ड में श्वास लेना, दस सैकण्ड में छोड़ना। एक मिनिट में तीन श्वास। ६. दस सैकण्ड में श्वास लेना, दस सैकण्ड अन्तःकुम्भक, दस सैकण्ड श्वास छोड़ना, दस सैकण्ड बाह्य कुम्भक। एक मिनिट में १.५ श्वास।

७. पंद्रह सैकण्ड में श्वास लेना, पंद्रह सैकण्ड में श्वास छोड़ना। एक मिनिट में दो श्वास। ८. पंद्रह सैकण्ड में श्वास लेना, पंद्रह सैकण्ड अन्तःकुम्भक, पंद्रह सैकण्ड में श्वास छोड़ना, पंद्रह सैकण्ड बाह्य कुम्भक। एक मिनिट में एक श्वास।

९. तीस सैकण्ड मे श्वास लेना, तीस सैकण्ड में श्वास छोड़ना। एक मिनिट में एक श्वास।

०९ अक्टूबर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीर्घश्वास-(२)

दीर्घश्वास का प्रयोग ऋतु परिवर्तन के साथ विभिन्न रूपों में किया जाना चाहिए।

श्वास की सामान्य विधि यह है कि दिन में बाएं नथुने से श्वास अधिक लिया जाए और रात्रि में दाएं नथुने से।

यदि गर्मी का मौसम हो तो केवल बाएं नथुने से श्वास लिया जाए और उसके साथ चन्द्रमा का ध्यान किया जाए।

यदि सर्दी का मौसम हो तो केवल दाएं नथुने से श्वास लिया जाए और उसके साथ सूर्य का ध्यान किया जाए।

बाएं स्वर से लिया जाने वाला श्वास शीतल और दाएं स्वर से लिया जाने वाला श्वास गर्म होता है। इसलिए सर्दी और गर्मी को सहन करने की शक्ति का विकास करने के लिए यह प्रयोग बहुत उपयोगी है।

१० अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रंगीन श्वास

श्वास के परमाणुओं में कृष्ण, पीत, नील, रक्त और श्वेत—ये पांचों रंग होते हैं। संकल्प के द्वारा इनमें से एक रंग को अभिव्यक्त कर उसका उपयोग किया जा सकता है।

पाचनतन्त्र को सशक्त बनाने के लिए पीले रंग का श्वास लिया जाता है।

ध्यान की मुद्रा में संकल्प करें—श्वास के साथ पीले रंग के परमाणु भीतर जा रहे हैं और पाचन-तन्त्र को पुष्ट कर रहे हैं।

पांच या दस मिनिट तक किया जाने वाला यह प्रयोग बहुत सफल होता है।

ज्ञान-तन्तुओं के विकास के लिए भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

११ अक्टूबर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीरप्रेक्षा

शरीरप्रेक्षा का प्रयोग सिर से अंगुष्ठ तक और अंगुष्ठ से सिर तक दोनों प्रकार से किया जा सकता है।

सीधे लेट जाएं। आंखें बंद करें। अपना ध्यान पैर के अंगूठे पर तब तक केन्द्रित करें, जब तक कि उसमें सिहरन पैदा न हो। फिर दूसरे पैर के अंगूठे पर ध्यान केन्द्रित करें, जिससे उसमें भी सिहरन पैदा हो जाए। धीरे-धीरे टखनों, घुटनों, कमर, पेट, छाती, बांहों, गरदन और सिर से सिहरन का अनुभव करें, जब तक कि समूचा शरीर झनझनाने न लगे, ध्यान बनाए रखें। एकाएक आभास होगा, आपका शरीर हल्का हो गया है।

१२ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर-पुष्टि

शरीर के किसी अवयव को पुष्ट और उन्नत करना चाहते हो तो उस अवयव पर चित्त को ले जाओ। लयबद्ध दीर्घश्वास का प्रयोग करो। मानसिक कल्पना करो कि उस अवयव में प्राण प्रवाहित हो रहा है। प्राण के प्रवाह का साक्षात् अनुभव करो। निरन्तर इस संकल्प से शरीर के प्रत्येक अवयव में शक्ति का संचार होगा। सम्पूर्ण शरीर में अद्भुत शक्ति का अनुभव होगा।

१३ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र : 'अर्हं' का न्यास

प्रत्येक चैतन्यकेन्द्र पर इष्ट मंत्र 'अर्हं' आदि का तीन-तीन बार जप करें। उसके साथ तादात्म्य का अनुभव करें।

यह क्रम शक्तिकेन्द्र से ज्ञानकेन्द्र तक करें। पुनः ज्ञानकेन्द्र से शक्तिकेन्द्र तक। यह एक आवृत्ति है। ऐसी तीन आवृत्तियां अवश्य करें। जैसे-जैसे अभ्यास परिपक्व होगा, वैसे-वैसे आवृत्ति बढ़ाएं।

न्यास का अभ्यास इष्ट मंत्र की सिद्धि के लिए बहुत आवश्यक है।

१४ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा-(१)

चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा के साथ सुझाव देना विकास व परिवर्तन के लिए बहुत आवश्यक है।

ज्ञानकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—ज्ञान का विकास हो रहा है।

शान्तिकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—भावशुद्धि का विकास हो रहा है।

ज्योतिकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—क्रोध उपशान्त हो रहा है।

दर्शनकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—अन्तर्दृष्टि का विकास हो रहा है।

प्राणकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—इन्द्रिय-संयम का विकास हो रहा है।

चाक्षुषकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—एकाग्रता का विकास हो रहा है।

प्रत्येक चैतन्य-केन्द्र पर श्वास के साथ नौ आवृत्तियां करें।

१५ अक्टूबर
२०००

Jain Education InternationaFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा-(२)

अप्रमाद की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—जागरूकता का विकास हो रहा है।

ब्रह्मकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—मानसिक पवित्रता का विकास हो रहा है।

आनन्दकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—आनन्द का विकास हो रहा है।

तैजसकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—तैजस शक्ति का विकास हो रहा है।

स्वास्थ्यकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—आत्मानुशासन का विकास हो रहा है।

शक्तिकेन्द्र की प्रेक्षा करते समय सुझाव दें—शक्ति का विकास हो रहा है।

प्रत्येक चैतन्यकेन्द्र पर श्वास के साथ नौ आवृत्तियां करें।

१६ अक्टूबर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवेग संतुलन की प्रक्रिया

संवेग को संतुलित करने के लिए अग्र मस्तिष्क पर ध्यान करना आवश्यक है। ज्योति-केन्द्र, शान्ति केन्द्र और पूरा ललाट—ये तीन महत्त्वपूर्ण स्थल हैं। इन पर ध्यान केन्द्रित कर संवेगों को संतुलित किया जा सकता है। जिस स्थान में संवेग उत्पन्न होते हैं, भावना और संकल्प के द्वारा उनका परिष्कार किया जा सकता है।

१७ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार प्रेक्षा

विचार मन की सतत प्रवाही क्रिया है। वह रुकती नहीं है। ध्यानकाल में उसे रोकने का अभ्यास किया जाता है। फिर भी उसे रोकना सहज नहीं होता। प्रयोग के द्वारा उसकी गति को मंद किया जा सकता है और समाप्त भी किया जा सकता है।

१. अपने ज्ञाता-द्रष्टा रूप का अनुभव करें, जो स्मृति, कल्पना और विचार से भिन्न है।

२. चित्त को द्रष्टा के रूप में सिर पर केन्द्रित करें। विचार तरंग उठे, उसे देखते जाएं, विचारों को रोकने का प्रयत्न न करें।

३. विचारो को देखें, विचारों के उद्गम स्रोत को देखें।

४. विचारों को पढ़ें, विचारों के साथ बहें नहीं, उन्हें देखें।

५. विचार-प्रवाह शांत हो, तब शांत रहें।

१८ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार शमन का प्रयोग-(१)

विचार से निर्विचार में जाने के लिए चक्षु का संयम और वाणी का संयम दोनों महत्त्वपूर्ण साधन हैं। इसीलिए ध्यान की मुद्रा में चक्षुसंयम का प्रयोग कराया जाता है।

चक्षुसंयम के तीन रूप बनते हैं—

१. आंखें बंद—इस अवस्था में ऊर्जा और अवधान दोनों एक दिशागामी हो जाते हैं। कुछ व्यक्तियों के बंद आंख की स्थिति में तनाव पैदा हो जाता है।

२. अधमुंदी आंखें—इस अवस्था में भी ऊर्जा और अवधान एक दिशागामी हो जाते हैं। तनाव पैदा नहीं होता। बंद आंख की स्थिति में, जो तनाव पैदा होता है, वह समाप्त हो जाता है।

१६ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार शमन का प्रयोग-(२)

३. अनिमेष नेत्र-चक्षु को अपलक रखना। एकाग्रता अथवा निर्विचार होने की दृष्टि से यह अवस्था सर्वोत्तम है। प्रेक्षाध्यान में अनिमेष प्रेक्षा का अभ्यास कराया जाता है। इसका प्रयोग नासाग्र दर्शन, भृकुटि दर्शन, भित्ति दर्शन, बिन्दु-दर्शन आदि अनेक रूपों में किया जा सकता है।

अनिमेष चक्षु से आकाश को देखना एकाग्रता तथा निर्विचार होने का उत्तम साधन है। इष्ट के मानसिक चित्र का निर्माण कर उसे अपलक दृष्टि से देखना एकाग्र होने का प्रयोग है।

२० अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार शमन का प्रयोग-(३)

वाणी का और जीभ का गहरा संबंध है। जीभ का संयम मनोनियन्त्रण का उत्तम उपाय है। खेचरी मुद्रा का प्रयोग इसीलिए किया जाता था। एक योगी के लिए खेचरी मुद्रा का प्रयोग संभव है किन्तु सामान्य व्यक्ति के लिए उसका प्रयोग संभव नहीं। जीभ को ऊपर की ओर उठाकर तालु की ओर रखने से मानसिक विचार शांत होते हैं, एकाग्रता का विकास होता है।

२१ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचार शमन का प्रयोग-(४)

१. वायु का सुषुम्ना में प्रवेश—वायु ईड़ा और पिंगला के मार्ग से हटकर जितना सुषुम्ना में प्रविष्ट होता है, उतना ही विकल्प का शमन होता है। सुषुम्ना में प्रवेश किए बिना वायु और मन की ऊर्ध्वगति नहीं हो सकती। ऊर्ध्वगति के बिना विकार को त्याग कर चित्त साम्यभाव में नहीं पहुंच सकता।

२. श्वास-संयम

३. श्वास-दर्शन

४. त्राटक (अनिमेष ध्यान)

५. अक्रिया

२२ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्विचार ध्यान

ध्यान के दो प्रकार हैं—सविचार अथवा सविकल्प, निर्विचार अथवा निर्विकल्प। निर्विचार ध्यान की अभ्यास पद्धति—

१. श्वास-संयम (कुंभक) करें।

२. जीभ को जबड़े के नीचे, दांतों के साथ गहरा दबा दें। जीभ स्थिर होती है तो विचार और चिन्तन अपने आप स्थिर हो जाता है।

३. जीभ को तालु की ओर उलट लें। जीभ के उलटते ही विचारों का प्रवाह एकदम रुक जाएगा।

४. जो विचार आ रहा है उसे ज्ञाता-द्रष्टा भाव से देखते रहें। देखते-देखते निर्विचार की स्थिति का निर्माण हो जाएगा।

२३ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमन की साधना-(१)

कायोत्सर्ग की मुद्रा। तैजस केन्द्र की अनिमेष प्रेक्षा। मन को उसी केन्द्र पर स्थापित कर दो। अनिमेष दृष्टि और मन—दोनों का योग होने पर श्वास की संख्या धीरे-धीरे कम हो जाएगी। मन अमन अवस्था में चला जाएगा।

तैजस केन्द्र नाभि का प्रदेश है। वहां प्राण और अपान का संगम होता है इसलिए विकल्प शमन सहज ही हो जाता है।

२४ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमन (Beyond mind) की साधना-(२)

आनन्दकेन्द्र में ज्योतिर्मय आत्मा का ध्यान करो।

विशुद्धिकेन्द्र में निर्मल ज्योति का ध्यान करो।

दर्शनकेन्द्र में वर्तुलाकार ज्योति का ध्यान करो।

प्राणकेन्द्र पर दृष्टि रखकर बारह अंगुल पीली या आठ अंगुल लाल वर्ण की ज्योति का ध्यान करो।

अपने हृदय में इष्टदेव की मूर्ति का ध्यान करो।

देह के मध्य में निष्कम्प दीपकलिका जैसी अष्टांगुल ज्योति का ध्यान करो।

ध्यान की दीर्घकालीन साधना से अमन की स्थिति का निर्माण हो जाएगा।

२५ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमन की साधना-(३)

हमारे शरीर में प्राण और चेतना के अनेक केन्द्र हैं। प्राण और चेतना पूरे शरीर में व्याप्त हैं। जहां उनकी सघनता होती है वहां उनका केन्द्र बन जाता है। पैर का अंगूठा भी एक केन्द्र है। अमन की साधना के लिए उस पर ध्यान करना बहुत महत्त्वपूर्ण है।

विधि—

एकान्त में शिथिलीकरणपूर्वक लेटकर एकाग्र चित्त से अपने दाएं पैर के अंगूठे पर दृष्टि स्थिर कर ध्यान करो। यह अमन की साधना का सहज उपाय है।

२६ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुप्त मन को जागृत करना-(१)

मन की अनेक अवस्थाएं हैं। स्थूल मन या चेतन मन प्रायः सक्रिय रहता है। साधारण मनुष्य उसी का प्रयोग करते हैं। साधक व्यक्ति स्थूल मन से परे सूक्ष्म मन अथवा अन्तर्मन को सक्रिय बनाकर सूक्ष्म सत्य को जानने की दिशा में प्रस्थान करता है।

'अ' का उच्चारण करते समय स्वास्थ्यकेन्द्र पर लाल वर्ण का चिंतन करें।

'उ' का उच्चारण करते समय आनन्दकेन्द्र पर नीले वर्ण का चिंतन करें।

'म्' का उच्चारण करते समय दर्शनकेन्द्र पर श्वेत वर्ण का चिंतन करें।

प्रारम्भ में पांच मिनिट, प्रतिसप्ताह दो-दो मिनिट बढ़ाते-बढ़ाते पंद्रह मिनिट तक 'ॐ' का जप करें।

इससे सुषुप्त मन, अन्तर्मन जागृत होते हैं।

२७ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुप्त मन को जागृत करना-(२)

'सो' का विशुद्धिकेन्द्र पर, 'ह' का दर्शन-केन्द्र पर, 'म्' का ज्ञानकेन्द्र पर ध्यान करते हुए त्रिसमय (प्रातः, मध्याह्न और सायं) जप करें।

प्रारम्भ में पांच मिनिट का प्रयोग करें। प्रतिसप्ताह दो-दो मिनिट बढ़ाते-बढ़ाते पन्द्रह मिनिट तक इसका गहरा अभ्यास करें। इस प्रयोग से सुषुप्त मन और अन्तर्मन दोनों जागृत होते हैं।

२८ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)-(१)

इन्द्रियों की प्रवृत्ति विषय की ओर होती है। विषय बाह्य जगत में हैं। विषय की ओर होने वाली प्रवृत्ति चंचलता पैदा करती है। उसका दिशा परिवर्तन (इन्द्रियों की प्रवृत्ति को बाहर से भीतर की ओर ले जाना) आवश्यक है।

१. स्पर्शन प्रतिसंलीनता।

सिद्धासन, सर्वेन्द्रिय संयम मुद्रा। जननेन्द्रिय का बार-बार आकुंचन। खेचरी मुद्रा द्वारा अपान वायु को ऊर्ध्व की ओर आकर्षित करें।

२. रसना प्रतिसंलीनता

खेचरी मुद्रा करें।

३. घ्राण प्रतिसंलीनता

श्वास-संयम सहित अनुलोम-विलोम प्राणायाम तथा उसमें इष्ट-मंत्र का मानसिक जप करें।

२६ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)-(२)

४. चक्षु प्रतिसंलीनता

दोनों नेत्रों को तर्जनी और मध्यमा से कोमलता से बंद करें। दृष्टि को आकाश में ले जाएं। चित्त को दोनों नेत्रों में केन्द्रित करें। अंगूठों को कानों में, अनामिकाओं के ऊपर के होंठ पर, कनिष्ठकाओं को निचले होंठ पर रखें।

अनिमेषध्यान से भी चक्षु की प्रतिसंलीनता होती है।

५. श्रोत्र प्रतिसंलीनता

सर्वेन्द्रिय-संयम मुद्रा, दृष्टि भ्रूमध्य में स्थापित करें। सिर आकाश की ओर रहे। इस मुद्रा में अनाहतनाद सुनने का अभ्यास करें।

३० अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिसंलीनता (प्रत्याहार)-(३)

सुखासन में बैठो। आंखें बंद करो। भीतर झांको।

इन्द्रिय प्रवृत्ति को उलटो—भीतर देखो, भीतर सुनो, भीतर चलो, भीतर बोलो, बैठो, सूंघो, चखो, सब कुछ भीतर करो।

प्रतिदिन आधा घण्टे का प्रयोग करें। कुछ दिनों में अनुभव होगा—अन्तर्मुखी दृष्टिकोण का विकास हो रहा है।

३१ अक्टूबर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता-(१)

जपमंत्र और श्वास का संबंध जानना जरूरी है। यदि श्वास के साथ जप का प्रयोग किया जाए तो एकाग्रता बहुत अच्छी होती है।

श्वास के तीन रूप बनते हैं—

१. पूरक के साथ जप शुरू करें और अन्तः-कुंभक जितना कर सकें, उतने समय तक करें।

२. पूरक के साथ जप शुरू करें और रेचन के समय तक करें।

३. रेचन और बाह्यकुंभक के साथ जपमंत्र का प्रयोग करें।

एक श्वास में २१ बार ॐ का जप करें। उक्त तीनों प्रयोगों में से किसी भी प्रयोग के साथ यह अभ्यास किया जा सकता है।

०१ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकाग्रता-(२)

चंचलता में तारतम्य होता है। उसके आधार पर एकाग्रता की अनेक अवस्थाएं बन जाती हैं। एकाग्रता की उच्च भूमिका के लिए निम्न निर्दिष्ट प्रयोग उपादेय हैं—

१. आकाश दर्शन

२. 'वकार' के भीतर चन्द्र दर्शन

३. अंधकार में ज्योति दर्शन

४. दीर्घश्वास

५. ध्यान कराने वाले के दर्शनकेन्द्र पर अनिमेष प्रेक्षा

६. मौन का अभ्यास

७. आहार संयम का अभ्यास।

०२ नवम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्र जप

मंत्र जप के अनेक उद्देश्य होते हैं। नमस्कार महामंत्र आध्यात्मिक साधना के लिए सर्वोत्तम है किन्तु अन्य प्रयोजनों से भी इसके प्रयोग किए जाते हैं—

१. कामवासना की शांति के लिए—
ॐ ह्रीं णमो सव्वसाहूणं

२. आवेश या उत्तेजना शांति के लिए—
ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं

३. मनोबल दुर्बल हो या डिप्रेशन के भाव आने पर—
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं

४. स्मृति विकास के लिए—
ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं

५. बुरा विचार आने पर—
ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं

६. विपत्ति के समय—
एसो पंचणमुक्कारो सव्वपावपणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं।।

प्रत्येक मंत्र का १०८ बार जप करें।

०३ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंत्र जप : दिव्य अनुभूति

एकान्त पवित्र स्थान। स्वच्छ आसन पर प्रतिदिन आधा से एक घण्टा तक ध्यान करो। आनन्दकेन्द्र पर सुनहरे अक्षरों में मंत्र लिखो। उसका उच्चारण करो और कुछ समय बाद उसे एकाग्रता के साथ देखो। दृष्टि उस पर स्थिर रहे। ध्यान लक्ष्य पर बना रहे।

एक मास के सघन प्रयोग के बाद अक्षर के स्थान पर दिव्य अनुभूति होगी।

०४ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तन्मूर्ति ध्यान

यदि तुम ज्ञान का विकास करना चाहते हो तो महावीर के सर्वज्ञ रूप का ध्यान करो।

यदि तुम शक्ति का विकास करना चाहते हो तो बाहुबली का ध्यान करो।

यदि तुम लब्धि का विकास करना चाहते हो तो गौतम का ध्यान करो।

यदि वीतरागता का विकास करना चाहते हो तो वीतराग का ध्यान करो।

तदाकार साधना में मन को इतना एकाग्र कर लें कि मन के एक बिंदु पर इष्ट का साक्षात्कार हो जाए। मन में वह सामर्थ्य है कि वह शरीर, रक्त, प्राण, बुद्धि और प्रज्ञा शक्तियों को ठीक उसी तरह बना देता है जिस प्रकार का इष्ट होता है।

०५ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इष्टसिद्धि-(१)

जो कार्य करना हो उसके लिए संकल्प करो। स्वयं को गहरी लय अवस्था में ले जाओ। ध्येय के सिवाय दूसरा कोई विचार मन में न रहे। इस अवस्था में दूसरा कोई विचार न रहे।

पहले लक्ष्य का निर्धारण करो। उसे एक कागज पर लिख लो। खुली आंखों से उसे देखो और उस पर एकाग्र हो जाओ। लक्ष्यसिद्धि में सफलता मिलेगी।

०६ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इष्टसिद्धि-(२)

१. आत्मविश्वास—मैं यह कार्य कर सकता हूं। मैं इसमें अवश्य सफल होऊंगा।

२. मनोबल को बढ़ाने का निरन्तर संकल्प करते रहो।

३. सारे विचारों को छोड़ केवल लक्ष्य पर मन को केन्द्रित करो।

४. लक्ष्य सफल हो रहा है, ऐसा अनुभव करो।

५. एक बार में यदि सफलता न मिले तो आन्तरिक शक्ति के जागरण का संकल्प करो।

०७ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इष्टसिद्धि-(३)

पूर्ण एकाग्रता से किसी भी वस्तु की इच्छा की जाती है तो उसके प्रभाव से सूक्ष्म आकाश में एक प्रकार के कंपन उत्पन्न होकर इष्ट वस्तु पर अपना घेरा डाल देते हैं। यह परिणमन का सिद्धान्त है।

मनुष्य के भीतर नाना प्रकार के प्रकम्पन होते हैं। उन प्रकम्पनों का एक आकार बन जाता है, इष्ट का साक्षात् हो जाता है।

०८ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकल्प-पुष्टि

संकल्प सफलता का असाधारण हेतु है। संकल्प सिद्ध होने पर ही सफलता का हेतु बनता है। वह असिद्ध होने पर सफलता का हेतु नहीं बनता।

संकल्प को सिद्ध करने की अभ्यास विधि इस प्रकार है—

संकल्प की भाषा का निर्धारण करें, कायोत्सर्ग की मुद्रा में बैठें। तीन बार बोलकर संकल्प दोहराएं। फिर मानसिक रूप में तीन बार दोहराएं। उसके बाद श्वास का संयम करें। पुनः श्वास लें, श्वास-संयम करें। तीन बार पूरक व तीन बार श्वास का संयम। दस मिनिट तक यह प्रयोग चलता रहे। श्वास-संयम के समय शब्द छूट जाते हैं। उस क्षण में संकल्प आत्मगत होकर पुष्ट बन जाता है।

०६ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकल्पशक्ति का विकास-(१)

दृढ़ निश्चय से अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति को झेलने की क्षमता पैदा होती है और उस क्षमता से संकल्पशक्ति मजबूत बनती है।

१. एक घंटा सर्दी सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

२. एक घंटा गर्मी सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

३. एक घंटा भूख सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

४. एक घंटा दंश सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

५. एक घंटा आक्रोश सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

६. एक घंटा वध सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

७. एक घंटा रोग सहूंगा, कष्ट से विचलित नहीं होऊंगा।

८. गर्मी में ठंड का प्रयोग : बर्फ का अनुभव करें।

९. ठण्ड में गर्मी का प्रयोग : उष्णता का अनुभव करें।

नियमित प्रयोग से संकल्पशक्ति और अधिक मजबूत हो जाती है।

१० नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकल्पशक्ति का विकास-(२)

संकल्पशक्ति का संबंध परिणमन के सिद्धान्त के साथ है। परिणमन स्वाभाविक भी होता है और प्रयत्नजन्य भी होता है। हम जिस कार्य के लिए संकल्प का प्रयोग करते हैं, उस कार्य में हमारा परिणमन शुरू हो जाता है और वह निश्चित अवधि के बाद एक आकार ले लेता है। उसका अभ्यास निम्नलिखित विधि से किया जा सकता है—

१. वज्रासन की मुद्रा में बैठें।

२. पृष्ठरज्जु सीधा रहे।

३. दीर्घश्वासपूर्वक पूरक करें।

४. श्वास-संयम के समय स्वतः सूचना का प्रयोग करें—प्राण का प्रवाह दर्शनकेन्द्र की ओर जा रहा है।

५. वैसा ही मानसिक चित्र बनाएं। तीन मिनिट तक इसका प्रयोग करें।

६. फिर पांच मिनिट तक केवल दीर्घश्वास का प्रयोग करें।

७. भावना करें—मेरा आत्मबल बढ़ रहा है। मेरी संकल्प शक्ति का विकास हो रहा है।

८. रेचन के साथ भावना करें—मानसिक दुर्बलता निःश्वास के साथ बाहर निकल रही है।

११ नवम्बर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकल्प शक्ति का प्रशिक्षण

संकल्पशक्ति का विकास किया जा सकता है। उसके लिए विधिपूर्वक अभ्यास जरूरी है।

१. संकल्प की धारणा करो।

२. दृढ़ निश्चय की भाषा में बोलकर दोहराओ।

३. दृढ़ निश्चय की भाषा में उपांशु जप करो।

४. दृढ़ निश्चय की भाषा में मानसिक जप करो।

५. त्रिबंध करके कुंभक के समय तीन बार संकल्प दोहराओ।

६. फिर धारणा करो—मस्तक के पिछले भाग से रश्मियां निकल रही हैं और कार्यक्षेत्र में पहुंचकर अपना कार्य कर रही हैं।

७. पहले अपने ज्ञानतंतुओं को कृत्य का निर्देश दें।

८. फिर कर्मतन्तुओं को अपनी इच्छानुसार कार्य करने का निर्देश दें।

९. संकल्प के अनुसार चित्र का निर्माण करें।

१२ नवम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्छा शक्ति का विकास

शक्ति संवर्धन के लिए आसन, श्वास, बंध आदि के प्रयोग बहुत उपयोगी हैं।

१. पद्मासन में बैठें। मूलबंध करें।

२. दाएं नथुने से श्वास लें।

३. जालन्धर बंध कर दाएं हाथ से बाएं पैर के अंगूठे को पकड़कर सिर को बाएं घुटने पर टिकाकर श्वास संयम करें।

४. बाएं नथुने से रेचन करें।

५. फिर बाएं नथुने से पूरक, श्वास संयम और दाएं से रेचन करें।

यह अभ्यास प्रारम्भ में पांच मिनिट करें। इसे धीरे-धीरे एक घण्टा तक बढ़ाया जा सकता है।

१३ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(१)

ब्रह्मचर्य का विकास करने के लिए कुछ प्रयोग महत्त्वपूर्ण हैं—

१. दीर्घ श्वास लें और दीर्घ श्वास छोड़ें। पूरक और रेचक की संधि पर ध्यान केन्द्रित करें। श्वास लेने के बाद क्षण भर के लिए श्वास-संयम करें और उस पर ध्यान केन्द्रित करें। रेचन के बाद भी क्षण भर श्वास संयम करें और फिर उस पर ध्यान केन्द्रित करें।

इस प्रयोग का दीर्घकाल तक अभ्यास करें।

२. सुषुम्ना में श्वास या प्राणधारा का अनुभव करें। शक्तिकेन्द्र की प्राणधारा ऊपर जाए, तब 'अ' का और नीचे आए तब 'हं' का ध्यान करें।

३. दर्शनकेन्द्र पर 'ॐ ह्रीं क्ष्वीं' का साक्षात्कार करें।

१४ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(२)

ब्रह्मचर्य की साधना के लिए उत्तानशयन आसन में की जाने वाली कुछ क्रियाएं बहुत उपयोगी हैं—

१. कानों को रूई से बन्द करें।

२. दृष्टि नासाग्र पर टिकाएं।

३. दीर्घ श्वास के साथ-साथ श्वास-संयम करें।

भृकुटि त्राटक—खुली आंख से भृकुटि को देखें, इससे अपान पर प्राण का नियंत्रण होता है।

४. नासाग्र पर त्राटक करें।

इसकी पांच आवृत्तियां करें। धीरे-धीरे बढ़ाएं। एक आवृत्ति में १५ से ३० सैकण्ड तक अभ्यास करें।

१५ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(३)

ब्रह्मचर्य का संबंध भाव, मन और शरीर तीनों के साथ है। इसलिए उसकी साधना शारीरिक, मानसिक और भावात्मक तीनों स्तर पर करणीय है।

शारीरिक प्रयोग—१. कामवासना का विचार आए, तब दृष्टि को छत पर लगाकर ध्यान ऊपर की ओर ले जाएं।

२. त्रिबंध से प्राणशक्ति ऊर्ध्वगामी होती है।

३. कण्ठ का कायोत्सर्ग।

मानसिक प्रयोग—१. मन की एकाग्रता के लिए दीर्घ श्वास का प्रयोग।

२. मनोबल के लिए नाड़ी शोधन का प्रयोग।

भावात्मक प्रयोग—विशुद्धिकेन्द्र की प्रेक्षा सवा घण्टा करें।

१६ नवम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(४)

१. पद्मासन या वज्रासन की मुद्रा में बैठें।

२. प्राणकेन्द्र पर अनिमेष प्रेक्षा का प्रयोग करें। श्वास संयम करें।

३. फिर श्वास का रेचन और श्वास-संयम करें।

४. दर्शनकेन्द्र पर अनिमेष प्रेक्षा कर पूरक और श्वास-संयम करें।

१५ से ३० सैकण्ड तक इसका अभ्यास करें। फिर रेचन और श्वास-संयम करें। यह पूरी एक आवृत्ति हुई।

इसे पांच बार करें और अभ्यास करते-करते बीस तक पहुंच जाएं।

१७ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य-(५)

ऊर्जा का पूरे शरीर में संतुलन होता है तब वृत्तियां भी संतुलित रहती हैं। किसी एक स्थान में ऊर्जा का अधिक संचय हो जाने पर उस स्थान की वृत्ति में उभार आ जाता है। काम-केन्द्र पर संचित ऊर्जा का संतुलन बनाए रखने के लिए यह प्रयोग किया जा सकता है।

१. पद्मासन या वज्रासन में बैठें।

२. समवृत्ति श्वास का प्रयोग करें।

३. श्वास का रेचन करते समय जननेन्द्रिय को ऊपर की ओर आकर्षित करें।

४. संकल्प करें—ऊर्जा का ऊर्ध्वारोहण हो रहा है।

१८ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रिय-विजय-(१)

साधना का क्षेत्र, सामाजिक क्षेत्र या राजनीति का क्षेत्र—इन्द्रिय-विजय सर्वत्र अपेक्षित है, साधक के लिए अधिक। एक सीमा तक सबके लिए। इसका अभ्यासक्रम—

१. पद्मासन की मुद्रा में बैठें।

२. पृष्ठरज्जु को सीधा रखें।

३. दोनों नथुनों से धीरे-धीरे पूरक करें।

४. पूरक के पश्चात् दाएं अंगूठे से दाएं नथुने को बंद कर, बाएं नथुने से वेग के साथ रेचन करें।

५. फिर दोनों नथुनों से पूरक करें।

६. पूरक के पश्चात् बाएं नथुने को बंद कर दाएं नथुने से वेग के साथ रेचन करें।

प्रारम्भ में पांच आवृत्तियां करें, फिर अभ्यास बढ़ाते हुए सोलह आवृत्तियां करें।

१६ नवम्बर
२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रिय-विजय-(२)

इन्द्रिय-संयम के लिए इन्द्रिय-विजय प्राणायाम का प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है।

प्रयोग की विधि—

सुखासन, कायोत्सर्ग की मुद्रा। दोनों नथुनों से श्वास का पूरक, मुंह से रेचक। रेचन वेग के साथ किया जाए। वह भी एक साथ तीन या चार बार में किया जाए।

इस प्रक्रिया में विजातीय तत्त्व का सम्यक् रेचक होता है। कामवासना उद्दीपन करने वाली प्रणाली प्रभावित होती है। उत्तेजना कम हो जाती है।

२० नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयम

कायोत्सर्ग। जीभ को तालु में लगाओ। ध्यान नासाग्र अथवा भ्रूमध्य पर केन्द्रित करो। मूलबंध और ओम् का मानसिक जप करो। श्वास का रेचन करो और श्वास का पूरक कर उसे नासाग्र पर स्थापित करो। इस प्रकार के अभ्यास से वाणी और मन की एकता सिद्ध होगी।

२१ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोध-नियन्त्रण-(१)

भावना, अनुप्रेक्षा (स्व-सम्मोहन) द्वारा आवेग को नियंत्रित किया जा सकता है। उसका विधिवत् प्रयोग करने से व्यक्ति सफल होता है। क्रोध-नियंत्रण के लिए अनुचिंतन करें—

१. क्रोध-नियंत्रण कायोत्सर्ग १० मिनिट।

अनुचिंतन—

क्रोध एक असाधारण आवेग है। क्रोध वही करता है, जो भावनात्मक दृष्टि से परिपक्व नहीं है। क्रोध शक्ति को क्षीण करता है। मैं अपने क्रोध पर विजय प्राप्त कर सकता हूं। मैं अपने आपको भावित करता रहूंगा कि मुझे कोई उत्तेजित नहीं कर सकता। मैं अपने विवेक को काम में लूंगा, आवेग के अनुसार कार्य नहीं करूंगा। मुझे क्रोध आ रहा है, इसका पता चलता है। मैं अपने विचारों को बदल दूंगा। क्रोध पैदा होते ही मैं कायोत्सर्ग में चला जाऊंगा। दीर्घ श्वास और श्वास-संयम का प्रयोग शुरू कर दूंगा।

२२ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोध-नियन्त्रण-(२)

१. पद्मासन या वज्रासन की मुद्रा में बैठें। उज्जाई प्राणायाम का प्रयोग करें। ध्यान ज्योति केन्द्र पर केन्द्रित करें। प्राणायाम के समय भी ध्यान ज्योति केन्द्र पर बना रहे।

इस अभ्यास को ५ मिनिट से प्रारम्भ कर ३० मिनिट तक करें।

इससे नाड़ियों को आराम मिलता है और मस्तिष्क शांत रहता है।

उज्जाई प्राणायाम का प्रयोग अनिद्रा के रोग को मिटाने में उपयोगी है, वैसे ही क्रोध की उत्तेजना को शान्त करने में उपयोगी है।

२३ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभय का विकास

भय आध्यात्मिक विकास में बहुत बड़ी बाधा है। अध्यात्म स्वतन्त्र चेतना की अवस्था है और भय उस चेतना को अवरुद्ध करता है। साधना और अभय एक तराजू के दो पलड़े हैं। अभय के विकास के लिए यह प्रायोगिक पद्धति है—

१. उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास करें।—१० मिनिट

२. नासाग्र पर अनिमेष प्रेक्षा करें।—३ मिनिट।

३. कायोत्सर्ग की मुद्रा में लेटकर शरीर को पूर्ण शिथिल कर दें।

४. शिथिलीकरण की मुद्रा में पांच मिनिट रहने के पश्चात् 'मैं भय से मुक्त हो रहा हूं' यह सुझाव दें। 'मैं उठूंगा तब भय से मुक्त होकर उठूंगा' यह सुझाव १५ मिनिट तक दें।

यह प्रयोग प्रातःकाल करें। कम से कम एक सप्ताह और अधिक से अधिक तीन महीने तक करें।

२४ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहिंसा आदि का अभ्यास

अहिंसा, सत्य आदि की साधना का एक क्रम है। साधना के प्रथम चरण में अहिंसा का संकल्प लिया जाता है। संकल्प मात्र से वह सिद्ध नहीं होती। उसे सिद्ध करने के लिए अभ्यास आवश्यक है।

एकान्त में बैठो। शरीर, श्वास और मन को शिथिल करो। पांच-दस मिनिट तक इन्हें शिथिल करने के लिए सूचना देते जाओ। ये जब शिथिल हो जाएं, तब अहिंसा की अनुप्रेक्षा करो। एक मास तक प्रतिदिन आधा घंटा इसका अभ्यास करो। पन्द्रह मास में इन पन्द्रह तत्त्वों का अभ्यास करो।

पन्द्रह तत्त्व—

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह।

अभय, क्षमा, मार्दव, आर्जव, लाघव।

मैत्री, प्रमोद, करुणा, माध्यस्थ्य, एकत्व।

२५ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृतस्राव और रसायन

स्वर विद्या के साथ-साथ रसायन विद्या का ज्ञान भी आवश्यक है। वर्तमान विज्ञान ने शरीरस्थ अनेक रसायनों का प्रतिपादन किया है। योग के प्राचीन साहित्य में अमृत के स्राव का उल्लेख मिलता है। उसकी विज्ञान द्वारा प्रतिपादित रसायनों से तुलना की जा सकती है।

१. जालन्धर बंध—कण्ठ को संकुचित कर ठुड्डी को फेफड़े के ऊपरीभाग में स्थापित करने पर जालन्धर बंध सिद्ध होता है। इस साधना से शरीर में अमृत का संतुलन बना रहता है।

२६ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृत प्लावन

यह मंत्रसाधना का एक विशिष्ट प्रयोग है। मंत्र वर्णों का न्यास करने के बाद चिन्तन करें कि मस्तिष्क से चार अंगुल ऊपर के भाग से अमृत का स्राव हो रहा है। अमृत की ऊर्मियां शरीर के हर अवयव को आप्लावित कर रही हैं। शरीर अमृतमय हो रहा है। विजातीय तत्त्व बाहर निकल रहे हैं। आनन्द का वातावरण बन रहा है।

मंत्र के इष्ट का अवतरण हो रहा है। उसकी शक्ति शरीर में संक्रान्त हो रही है। इसकी साधना के लिए चार बजे से सूर्योदय तक का समय अधिक उपयुक्त है।

२७ नवम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्याधि चिकित्सा-(१)

भावना अथवा स्व-सम्मोहन का प्रयोग व्याधि चिकित्सा के लिए अनेक विधियों से किया जाता है—

१. पांच मिनिट दीर्घ श्वास और पांच मिनिट कायोत्सर्ग करें।

२. दीर्घ श्वास का प्रयोग करते हुए संकल्प करें कि रक्त के साथ मेरे प्राण का प्रवाह रुग्ण स्थान की ओर जा रहा है। उसका मानसिक चित्र बनाएं और श्वास-संयम करें।

३. श्वास का रेचन करते समय यह भावना करें कि पीड़ा या रोग के कीटाणु बाहर निकल रहे हैं।

४. बाहर श्वास का संयम करें और यह भावना करें कि प्राण भीतर जाकर रुग्ण अवयव को स्वस्थ कर रहा है।

२८ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्याधि चिकित्सा-(२)

१. सुप्त कायोत्सर्ग करें।

२. सुप्त कायोत्सर्ग की मुद्रा में 'अर्हं' का जप एक मिनिट में ८० या ६० बार करें।

३. तीन मिनिट के बाद जप के उच्चारण में अन्तराल बढ़ाते जाएं और जप की संख्या को घटाते-घटाते एक मिनिट में दस या पांच तक ले जाएं। अंतराल-काल में निर्विचार रहें।

इस स्थिति में स्वसम्मोहन होता है। अब जिस शारीरिक और मानसिक व्याधि की चिकित्सा करनी हो, उसके प्रतिपक्ष की आकृति का निर्माण करें। जैसे मेरा घुटना स्वस्थ है।

एकाग्र मन से उस आकृति को स्थिर कर उसे भूल जाएं, स्वसम्मोहन की स्थिति में रहें।

एक सप्ताह के प्रयोग के बाद स्वस्थता की अनुभूति होगी।

२६ नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वास्थ्य

व्यक्ति अपने स्वास्थ्य के लिए स्वयं प्रयोग कर सकता है और पूरी तन्मयता के साथ यदि वह प्रयोग करे तो सफल हो सकता है।

शिथिल होकर लयबद्ध श्वास लें। श्वास द्वारा अधिक प्राण खींचने का संकल्प करें। रेचन के साथ प्राण को रुग्ण स्थान पर भेजें। सिर से लेकर रुग्ण भाग तक हाथ फेरें। कल्पना करें कि प्राण भुजाओं में प्रवाहित होता हुआ अंगुलियों के छोरों से शरीर में प्रवेश कर रहा है, रुग्ण अंग को स्वस्थ कर रहा है।

३० नवम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पीड़ा-शमन-(१)

मस्तिष्क में एंडोर्फिन नामक प्राकृतिक दर्दनाशक पदार्थ होते हैं जो मार्फीन से कहीं प्रभावकारी होते हैं। ये मस्तिष्क के पार्श्वभाग में जमे हुए रहते हैं। मस्तिष्क के इस भाग का संबंध प्रबल मनोवेगों से है।

मस्तिष्क की अपनी अलग प्रणालियां होती हैं। वे पीड़ा संकेतों को रोकने में सक्षम हैं। इन प्रणालियों को बंद अथवा चालू किया जा सकता है।

पीड़ा शमन के लिए सम्मोहन और प्राण के प्रयोग बहुत उपयोगी हैं।

०१ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पीड़ा-शमन-(२)

मनुष्य के शरीर में कुछ केन्द्र भाव, संवेदना के लिए उत्तरदायी हैं। उनमें पीड़ा की अनुभूति होती है और प्रसन्नता की अनुभूति होती है।

पीड़ाशामक औषधियों के द्वारा एनकेफेलिन और एन्डोर्फिन रसायन पैदा किए जाते हैं। उनकी सघनता मस्तिष्क और सुषुम्ना के उन भागों में अधिक होती है जो भाव-संवेदना के लिए उत्तरदायी माने जाते हैं।

उक्त रसायनों को जप, ध्यान, वैराग्य, भक्ति आदि अनेक साधनों से पैदा किया जा सकता है।

०२ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निद्रा

नींद की तीन अवस्थाएं हैं—

१. अति निद्रा

२. सम्यक् निद्रा

३. अनिद्रा

अतिनिद्रा

रंग विज्ञान के अनुसार लाल रंग की कमी होने पर नींद अधिक आती है।

उपचार

रंगीन श्वास के द्वारा लाल रंग का संतुलन किया जा सकता है। तैजसकेन्द्र पर बाल सूर्य का ध्यान लाल रंग की पूर्ति में सहायक बनता है। कपालभाति और नाड़ीशोधन प्राणायाम भी इसके लिए उपयोगी हैं।

०३ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक् निद्रा

जो व्यक्ति नियत समय पर सोता है, नियत समय पर जाग जाता है, उसके सम्यक् निद्रा होती है।

नींद और स्वप्न का एक विचित्र योग है। अनेक लोगों की नींद स्वप्निल होती है। अच्छे, बुरे तथा यथार्थ और अयथार्थ स्वप्न आते रहते हैं। वे सपने नींद को मिथ्या नींद बना देते हैं इसलिए सोने से पहले उनका उपचार करना चाहिए।

उपचार—

१. नाड़ीशोधन प्राणायाम की तीन आवृत्ति करके सोने पर सपने की समस्या सुलझ सकती है।

२. सोने से पहले १० मिनिट तक अपने इष्ट मंत्र का जप करना चाहिए।

३. कायोत्सर्ग का प्रयोग भी सम्यक् निद्रा में सहयोगी बनता है।

०४ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनिद्रा

पीले रंग की कमी होने पर नींद कम आती है। कायोत्सर्ग की मुद्रा में सोना और विचारमुक्त रहने का अभ्यास संतुलित नींद में सहायक बनते हैं।

उपचार—

१. संतुलित नींद के लिए शक्तिकेन्द्र पर पीले रंग का ध्यान।

२. विशुद्धि केन्द्र पर 'ह' का जप।

३. उज्जायी प्राणायाम की १२ आवृत्तियां करें।

०५ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातृका-न्यास-(१)

मन्त्र शास्त्र में न्यास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मातृका न्यास—वर्णमाला के बिना जो जप किया जाता है वह सफल नहीं होता। इसलिए साधक को जप के प्रारम्भ में मातृका-न्यास का प्रयोग करना चाहिए।

मातृका-न्यास के तीन विभाग किए गये हैं—

प्रथम विभाग—अकार आदि सोलह स्वर।

दूसरा विभाग—ककार आदि पच्चीस वर्ण।

तीसरा विभाग—यकार आदि आठ वर्ण।

०६ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातृका-न्यास-(२)

न्यास दो प्रकार का होता है—

१. बाह्य मातृका-न्यास

२. आन्तरिक मातृका-न्यास

आन्तरिक मातृका-न्यास अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

आन्तरिक मातृका-न्यास की विधि—

१. नाभि कमल (तैजसकेन्द्र) पर सोलह पत्तों वाले कमल की कल्पना करें। प्रत्येक पत्र पर अकार आदि सोलह स्वरों का न्यास करें।

२. हृदय कमल (आनन्दकेन्द्र) पर चौबीस पत्तों वाले कमल की कल्पना करें। प्रत्येक पत्र पर ककार आदि वर्णों का ध्यान करें। मध्यवर्ती कमल पर मकार का न्यास करें।

३. मुख कमल पर आठ पत्तों वाले कमल की कल्पना करें। प्रत्येक पत्र पर यकार आदि वर्णों का न्यास करें। मानसिक स्तर पर स्वर और वर्ण लिखें, फिर उन पर ध्यान करें।

०७ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातृका-न्यास-(३)

न्यास के विषय में एक और निर्देश मिलता है। तीन स्थान (नाभि कमल, हृदय और मुख) पर वर्णमाला का न्यास करें।

न्यास करने के पश्चात् वर्णमाला को प्रदक्षिणा करती हुई और भ्रमण करती हुई देखें।

उस समय तक प्रत्येक स्वर और वर्ण पर ध्यान केन्द्रित करें।

यह प्रयोग श्रुतज्ञान के विकास के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।

०८ दिसम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राणशक्ति

मानसिक विकास के लिए प्राणशक्ति का विकास जरूरी है। प्रत्येक प्रवृत्ति के साथ प्राण-ऊर्जा का व्यय होता है। भोजन के द्वारा उसकी पूर्ति की जा सकती है। विशेष प्रयोग द्वारा उसका संवर्धन किया जा सकता है।

प्राण के विकास का अभ्यास—

१. कायोत्सर्ग

२. दीर्घश्वास

पूरक के समय अनुप्रेक्षा करें—

१. शरीर के रोम-रोम से प्राण का आकर्षण हो रहा है।

२. प्राणशक्ति का विकास हो रहा है।

३. शरीर स्वस्थ हो रहा है।

४. मन स्वस्थ हो रहा है।

५. आवेग शांत हो रहे हैं।

०६ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैजस शक्ति

पद्मासन की मुद्रा में बैठकर दीर्घ श्वास का प्रयोग करें। शक्तिकेन्द्र पर ध्यान करें। पूरक के समय वहां श्वास का अनुभव करें। 'सो' के मृदु और मंद उच्चारण के समय श्वास का पूरक करें। 'हं' के उच्चारण के समय श्वास का रेचन करें। इसी प्रकार श्वास के पूरक के समय 'ॐ' अथवा 'अर्' का मृदु-मंद उच्चारण करें। श्वास रेचन के साथ 'म्' अथवा 'हम्' का उच्चारण करें। इसका अभ्यास परिपक्व होने पर तैजस शक्ति का जागरण होता है।

१० दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैजस चक्र

वही व्यक्ति प्राणवान रह सकता है जिसका तैजस चक्र सक्रिय होता है। निम्न निर्दिष्ट अभ्यास के द्वारा उसे सक्रिय किया जा सकता है अथवा रखा जा सकता है—

मैं सूर्यचक्र अथवा तैजस चक्र का विकास करने के लिए 'ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं' मंत्र की साधना कर रहा हूं।

'ॐ ऋषभाय नमः' इस मंत्र का ९ बार उच्चारण करें। चित्त को तैजसकेन्द्र पर एकाग्र करें। संकल्प करें—तैजस चक्र का निर्माण हो रहा है।

मंत्र का मानसिक जप चलता रहे। प्रारम्भ में उच्चारण करें। बीच में कुछ-कुछ अन्तराल से उच्चारण और अंत में मानसिक जप करें। प्रतिदिन ४५ मिनिट तक इसका प्रयोग करें।

११ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाड़ी शोधन

योगाभ्यास से पूर्व नाड़ी शोधन जरूरी है उसका महत्त्वपूर्ण प्रयोग है नाड़ी शोधन—

१. बाएं से श्वास, अन्तःश्वास संयम। नाभि पर चन्द्र का ध्यान। बाएं से ही रेचन। बाह्य श्वास संयम। तीन आवृत्तियां करें।

इसी प्रकार दाएं से पूरक, श्वास-संयम, रेचक, श्वास-संयम। नाभि पर सूर्य का ध्यान। तीन आवृत्तियां करें।

दोनों नथुनों से श्वास। अंतःश्वास संयम। मुंह से रेचन। बाह्य श्वास-संयम। एक आवृत्ति करें। इस प्रकार यह एक आवृत्ति होती है। ऐसी तीन आवृत्तियां करें। तीन मास तक एक आवृत्ति करें। प्रतिमास एक-एक आवृत्ति की वृद्धि करें। दस तक ले जाएं।

२. तीन मास से छह मास तक १० मिनिट निरन्तर समवृत्ति श्वास प्रेक्षा का अभ्यास करें।

फलतः नाड़ीशुद्धि होगी।

१२ दिसम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशिका परिवर्तन

हम अपने शरीर की प्रत्येक कोशिका में प्रवेश कर सकते हैं। भावना के अनुसार उन्हें प्रभावित कर सकते हैं। आवश्यकता है सजग रहने की। सर्वप्रथम हम कोशिका के प्रति जागरूक बनें। उसके साथ सम्पर्क स्थापित करें। भावना की ऊर्मियों का संप्रेषण करें। उसके साथ तादात्म्य स्थापित करें। जैसे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ बातचीत करें, वैसे ही कोशिकाओं के साथ बातचीत करें। उन्हें परिवर्तित होने का सुझाव दें। वे सुझाव की भाषा को समझ सकती हैं और निर्देश का पालन भी कर सकती हैं।

१३ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्युत प्रवाह मस्तिष्क में

मस्तिष्क में विद्युत का प्रवाह समीचीन होता है तब वह सम्यक् प्रकार से काम करता है। उसमें अवरोध पैदा होने पर मस्तिष्कीय गतिविधि अस्त-व्यस्त हो जाती है। कभी-कभी मूर्च्छा और मिर्गी जैसी व्याधि भी पैदा हो जाती है। इस समस्या को सुलझाने के लिए विद्युत प्रवाह का सम्यक्करण आवश्यक है।

सम्यक्करण के लिए 'ॐ' का जप बहुत उपयोगी है। मस्तिष्क पर ध्यान केन्द्रित करें। 'ॐ' का एक हजार बार जप करें। यदि श्वास के साथ कर सकें तो और अधिक लाभ हो सकता है।

१४ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुण संक्रमण

जो व्यक्ति जिस गुण का विकास करना चाहे उस गुण से सम्पन्न व्यक्ति का मानसिक चित्र बनाए। उस पर एकाग्र होकर ध्यानलीन हो जाए। इस प्रक्रिया से इष्ट सिद्धि होती है। जिस गुण का विकास करना चाहता है, उस गुण का ध्यान करने वाले में संक्रमण शुरू हो जाता है। भगवान महावीर का ध्यान सहिष्णुता के गुण का विकास करने में बहुत उपयोगी है।

१५ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शील पुरुष : पंचाङ्ग ध्यान

गुणात्मक विकास का शरीर के अवयवों के साथ संबंध है। इसलिए इसके अवयव ध्यान के आलम्बन बन जाते हैं।

पंचाङ्ग पुरुष की कल्पना करें। मस्तिष्क पर ध्यान केन्द्रित करें। मस्तिष्क का स्वरूप है उपशांत कषाय। ५ मिनिट तक इसकी अनुप्रेक्षा करें।

दाएं हाथ पर ध्यान केन्द्रित करें। विनम्रता दायां हाथ है। संकल्प करें—विनम्रता का विकास हो रहा है।

बाएं हाथ पर ध्यान केन्द्रित करें। सामञ्जस्य बायां हाथ है। संकल्प करें—सामञ्जस्य का विकास हो रहा है।

दाएं पैर पर ध्यान केन्द्रित करें। सहिष्णुता दायां पैर है। संकल्प करें—सहिष्णुता का विकास हो रहा है।

बाएं पैर पर ध्यान केन्द्रित करें। सेवा, सहयोग बायां पैर है। संकल्प करें—सेवा और सहयोग का विकास हो रहा है।

१६ दिसम्बर

२०००

Jain Education InternationalFor Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वातानुकूलन का अनुभव

सर्दी का मौसम आता है, शरीर में सर्दी का अनुभव बढ़ जाता है। गर्मी का मौसम आता है तब गर्मी का अनुभव बढ़ जाता है। योग के आचार्यों ने सर्दी में गर्मी और गर्मी में सर्दी बढ़ाने के प्रयोग विकसित किए। उनमें से दो प्रयोग यहां निर्दिष्ट हैं—

१. सूर्यभेदन प्राणायाम—दाएं से श्वास। कुंभक में त्रिबंध अथवा मूलबंध का प्रयोग। दाएं से रेचन। यह क्रम बराबर चले।

२. चन्द्रभेदन प्राणायाम—बाएं से श्वास। कुम्भक। रेचन। यह क्रम बराबर चले।

सूर्यभेदन प्राणायाम से ऊष्मा तथा चन्द्रभेदन प्राणायाम से शीतलता बढ़ती है।

१७ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नियन्त्रण शक्ति

साधना के लिए नियन्त्रण शक्ति का विकास जरूरी है। हर आदमी में नियंत्रण शक्ति का एक सामान्य अनुपात होता है। साधक के लिए उसका विकास इसलिए जरूरी है कि सामान्य नियन्त्रण शक्ति से साधना के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ा जा सकता।

नियन्त्रण शक्ति बढ़ाने के लिए महत्त्वपूर्ण प्रयोग है प्राणकेन्द्र और दर्शनकेन्द्र पर ध्यान। पहले तीन मिनिट प्राणकेन्द्र पर ध्यान करें, उसके बाद तीन मिनिट तक दर्शनकेन्द्र पर ध्यान करें।

१८ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्षीतप

अर्हत् ऋषभ की तपस्या के आधार पर वर्षीतप की परम्परा चल रही है। वर्षीतप के अनेक प्रयोग हो सकते हैं। आध्यात्मिक विकास के लिए वे बहुत प्रासंगिक हैं।

१. एक वर्ष तक प्रतिदिन तीन घण्टा कायोत्सर्ग का प्रयोग करें।

२. एक वर्ष तक प्रतिदिन तीन घण्टा ध्यान का प्रयोग करें।

३. एक वर्ष में किसी भी समय असहिष्णुता का भाव आने पर दूसरे दिन उपवास करें।

४. एक वर्ष में उत्तेजनापूर्ण व्यवहार होने पर दूसरे दिन उपवास करें।

५. एक वर्ष में अनुशासन और व्यवस्था का अतिक्रमण होने पर दूसरे दिन उपवास करें।

१९ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यसनमुक्ति

व्यसन जब स्नायविक बन जाता है तब उसे छोड़ना कठिन हो सकता है फिर भी दृढ़ संकल्प द्वारा उसे छोड़ा जा सकता है।

१. पांच मिनिट कायोत्सर्ग करें।

२. पांच मिनिट दीर्घ श्वास का प्रयोग करें।

३. पांच मिनिट संकल्पशक्ति को जागृत करें।

४. दस मिनिट तक सुझाव दें—मेरी चेतना पवित्र संकल्प से घिरी हुई है, उसमें कोई भी बुरा विचार प्रवेश नहीं करेगा।

५. पांच मिनिट तक व्युत्सर्ग का प्रयोग करें—श्वास का रेचन करते जाएं उसके साथ अनुभव करें—व्यसन की आदत का रेचन हो रहा है। अब मेरे मन में इसका विचार नहीं आएगा। मेरी संकल्पशक्ति इसे अपने भीतर नहीं आने देगी।

२० दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नई आदत का निर्माण

पुरानी आदत को बदला जा सकता है, नई आदत का निर्माण किया जा सकता है, आदत मे काट-छांट भी की जा सकती है। आदत के परिवर्तन का एक प्रयोग यह है—

१. पांच मिनिट दीर्घ श्वास का प्रयोग करें।

२. पांच मिनिट कायोत्सर्ग करें।

३. सुझाव के द्वारा निद्रा की स्थिति का अनुभव करें।

४. प्रबल इच्छाशक्ति का प्रयोग करें।

५. जिस आदत का निर्माण करना चाहते हैं उसके प्रति गहरी एकाग्रता।

ध्यान, धारणा और समाधि—तीनों का संयुक्त प्रयोग करें।

६. इस अवस्था में इष्ट आदत के निर्माण का सुझाव दें।

७. कायोत्सर्ग सम्पन्न कर उस आदत की पांच मिनिट अनुप्रेक्षा करें।

एक सप्ताह अथवा अपेक्षित हो तो अधिक समय तक इसका प्रयोग करें।

२१ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदत परिवर्तन

आदत को बदला जा सकता है। पुरानी आदत को बदलकर नई आदत का निर्माण किया जा सकता है। उसकी अभ्यास पद्धति यह है—

१. जिस आदत को बदलना हो, उसे स्पष्ट करें।

२. फिर पांच मिनिट दीर्घश्वास और पांच मिनिट कायोत्सर्ग करें।

३. अब जो आदत बदलनी हो, उसकी शब्दावली बना लें। जैसे अब मेरा क्रोध शांत हो जाएगा।

४. श्वास के साथ इस शब्दावली को मस्तिष्क की ओर ले जाएं।

५. सोलह बार इसका मानसिक उच्चारण करें।

६. फिर निर्विचार अवस्था में चले जाएं, उस स्थिति में बीस मिनिट रहें।

चार सप्ताह तक इसका अभ्यास करें। आपको अनुभव होगा—मेरी आदत बदल रही है।

२२ दिसम्बर

२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे की आदत बदलना

आदत बदलने के लिए प्रयोग स्वयं को करना चाहिए। स्वयं न कर सके तो उस स्थिति में उस व्यक्ति के लिए दूसरा व्यक्ति प्रयोग कर सकता है। उसकी विधि—

१. जिसकी आदत को बदलना हो उसे लेटा दें। २. उसके सिरहाने बैठें। ३. पांच मिनिट दीर्घश्वास का प्रयोग करें। ४. दीर्घ श्वास लेते हुए हाथ, जिसकी आदत बदलनी हो, उसके सिर पर रखें। अन्तःकुम्भक कर भावना करें—इसमें अमुक आदत का प्रवेश हो रहा है। यह अब अच्छा आचरण करेगा। ५. श्वास का रेचन करते समय भावना करें—इसकी बुरी आदत निकल रही है। बाह्य कुंभक कर भावना करें—इसका चित्त निर्मल हो रहा है। इसमें पवित्रता का संचार हो रहा है।

इस प्रकार नौ आवृत्तियां करें। सिर से हाथ उठाकर आकाश में झटक दें।

इस प्रयोग से दूसरे की क्रूरता, व्यसन आदि प्रवृत्तियों में परिवर्तन लाया जा सकता है।

२३ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन

१. रसायन परिवर्तन : भावशुद्धि

चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा

२. नशे की आदत में परिवर्तन

अप्रमादकेन्द्र प्रेक्षा

३. नाड़ी संस्थान पर नियंत्रण

श्वासप्रेक्षा

४. जीवनी शक्ति का विकास और दीर्घायु के लिए

चाक्षुषकेन्द्र प्रेक्षा

५. आरोग्य और कवित्व के लिए

शक्तिकेन्द्र प्रेक्षा

२४ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्ति परिवर्तन

पारिणामिक भाव हमारे स्वरूप का एक अंग है। उसके अनुसार प्रतिक्षण चेतन और अचेतन में परिणमन होता है। वह स्थूल जगत में परिवर्तन के रूप में जाना जाता है।

परिणमन निमित्त से होता है और बिना निमित्त भी होता है। हमारे आन्तरिक परिणमन के कुछ निमित्त ये हैं—

१. चंचलता को कम करने की युक्ति

श्वास प्रेक्षा।

२. प्रिय-अप्रिय संवेदन को कम करने की युक्ति

दर्शनकेन्द्र प्रेक्षा।

३. प्रमाद को कम करने की युक्ति

प्राणकेन्द्र, अप्रमादकेन्द्र प्रेक्षा।

४. बाहरी आकर्षण को कम करने की युक्ति

आनन्दकेन्द्र, विशुद्धिकेन्द्र प्रेक्षा।

२५ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्मृति-विकास

स्मृति का प्रश्न यदा-कदा उभरता रहता है। कुछ बच्चों की स्मृति कमजोर होती है। कुछ युवा और वृद्धों की स्मृति भी कमजोर हो जाती है। वासोप्रेसीन नामक हार्मोन का हमारी स्मृति के साथ सीधा संबंध है। मस्तिष्क के निचले हिस्से में स्थित बेर जितनी बड़ी एक ग्रन्थि उसका उत्पादन करती है। भुलक्कड़ व्यक्तियों में यह ग्रन्थि शिथिल हो जाती है। स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए कुछ प्रयोग निर्दिष्ट किए जा रहे हैं—

१. कनपटियों पर पीले रंग का ध्यान करें।

२. कनपटियों पर अंगुलियों से प्रकम्पन पैदा करें।

३. दीर्घ श्वास लें, अन्तःकुंभक करें। फिर श्वास रेचन करें, बाह्य कुंभक करें।

२६ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्वनि चिकित्सा

ध्वनि के प्रकम्पन शरीर और वातावरण दोनों को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक वर्ण के प्रकम्पन पृथक् होते हैं और उनका प्रभाव क्षेत्र भी पृथक्-पृथक् होता है।

उदाहरणस्वरूप—

बीजमंत्र	प्रभावक्षेत्र
ह्रां	कण्ठ, स्वरयंत्र, दमा, खांसी
ह्रीं	हृदय, गला, तालू, नाक, आंत
ह्रूं	यकृत, तिल्ली
ह्रैं	गुर्दा
ह्रौं	उपस्थ
ह्रः	फुफ्फुस, गला

२७ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वर चक्र

स्वर विद्या में तीन स्वर माने गए हैं। ये तीनों क्रमशः चलते हैं। सामान्य सिद्धान्त यह है—दिन में चन्द्रस्वर श्रेष्ठ है। रात्रि में सूर्यस्वर श्रेष्ठ है। स्थिर कार्य के लिए चन्द्रस्वर श्रेष्ठ है। चर कार्य के लिए सूर्यस्वर श्रेष्ठ है। ध्यान और समाधि के लिए सुषुम्ना श्रेष्ठ है।

स्वर विद्या के अनुसार प्रत्येक स्वर के चलने का समय तीन घड़ी (डेढ़ घण्टा) होता है। तिथि के साथ स्वर का सम्बन्ध है। इसके लिए विशेष जानकारी आवश्यक है।

२८ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैत्री

शत्रुता का भाव व्यक्ति में तनाव पैदा करता है, उससे निषेधात्मक भाव प्रबल हो जाता है। चेतना की विकृति का वह बहुत बड़ा कारण है। उससे बचना अपने हित में है। अभ्यास के द्वारा इस भाव का विलय किया जा सकता है।

१. मैत्री का विकास हो रहा है—इस विचार पर एकाग्रता का अभ्यास करें।

२. संकल्प का प्रयोग करें—मैं मैत्री का विकास करूंगा।

३. मैत्री का मानसिक चित्र बनाएं।

४. पुनः संकल्प करें—शत्रुता का भाव समाप्त हो रहा है। मैत्री का भाव पुष्ट हो रहा है।

२६ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जागृति

साधक को जागृत रहना जरूरी है। मूर्च्छा या शून्यता ध्यान नहीं है। ध्यान है जागृति।

जागृत रहने के लिए अनेक प्रयोग हैं, उनमें श्वास का प्रयोग सर्वोत्तम है।

सर्वप्रथम जागृत रहने का संकल्प करें। दीर्घ श्वास का प्रयोग करें।

श्वास के साथ-साथ चेतना को भीतर ले जाएं और गहरे में उतरें। अनुभव करें—श्वास और चेतना एक हो रही है।

श्वास के साथ बाहर आएं।

श्वास लेने और छोड़ने के बीच जो अश्वास की स्थिति है उसके प्रति जागरूक रहें।

३० दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्ञात को ज्ञात करना

मन के अदृश्य विकार को जो देखता है उसके विकार स्वयं क्षीण हो जाते हैं।

व्यक्ति खुली आंख से देखता है फिर आंख मूंदकर देखता है। यह प्रयोग अदृश्य को दृश्य बनाने वाला है।

आंखों पर दोनों हाथ रखने पर विचार शून्यता की स्थिति बनती है। पांच से पन्द्रह मिनिट तक इसका अभ्यास किया जाए तो अज्ञात भी ज्ञात होने लगता है।

३१ दिसम्बर
२०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट

1-3 जनवरी	भादरा	11 मार्च	रतनपुरा
4 जनवरी	रामगढ़	12 मार्च	हड़ियाल
5 जनवरी	एन. टी. आर	13-21 मार्च	टमकोर
7-18 जनवरी	नोहर	22 मार्च	दूधवाखारा
19 जनवरी	सहारणों की ढाणी	23 मार्च	लखाऊ
20 जनवरी	दुरजाना	24 मार्च	सुराना कृषि फार्म
21 जनवरी	खोपड़ा	25 मार्च से	
22 जनवरी	साहवा	7 अप्रैल	चूरू
23 जनवरी	झाड़सर	8-11 अप्रैल	रतननगर
24 जनवरी	भनीन	12-14 अप्रैल	रामगढ़
25 जनवरी	ताल भलाऊ	15 अप्रैल	देवास
26 जनवरी से		16-21 अप्रैल	फतेहपुर
17 फरवरी	तारानगर	22 अप्रैल	कल्याणपुरा
18 फरवरी	ददरेवा	23 अप्रैल	गुसाईंसर
19 फरवरी	नागली	24 अप्रैल से	
20 फरवरी से		7 मई	रतनगढ़
26 फरवरी	सादुलपुर	8 मई	पायली
27 फरवरी से		9-19 मई	राजलदेसर
9 मार्च	राजगढ़	20 मई	रत्नादेसर
10 मार्च	ढोकवा	21-29 मई	पड़िहारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

30 मई	रणधीसर
31 मई-5 जून	छापर
6-8 जून	चाड़वास
9-14 जून	बीदासर
15 जून	चाड़वास
16-20 जून	सुजानगढ़
21 जून से	
15 नवंबर	लाडनूं
16-18 नवंबर	सुजानगढ़
19 नवंबर	छापर
20 नवंबर	जेतासर
21 नवंबर	दरन्सुसर
22 नवंबर	राजलदेसर
23 नवंबर	जोरावरपुरा
24 नवंबर	कुडिया
25-27 नवंबर	मोमासर
28 नवंबर	आड़सर

29 नवंबर	ठुकरियासर
30 नवंबर से	
1 दिसंबर	श्रीडूंगरगढ़
2 दिसंबर	लखासर
3 दिसंबर	झंझेऊ
4 दिसंबर	देराजसर
5 दिसंबर	सेरुणा
6 दिसंबर	गुसाईसर
7-9 दिसंबर	सींथल
10 दिसंबर	गाढवाला
11 दिसंबर	व्यास कॉलोनी, बीकानेर
12-13 दिसंबर	लालकोठी, बीकानेर
14-31 दिसंबर	गंगाशहर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इक्कीसवीं शताब्दी अध्यात्म की शताब्दी होगी — यह स्वर यत्र तत्र सुनाई दे रहा है।

आर्थिक विकास, पदार्थ विकास और यान्त्रिक विकास की दौड़ में अध्यात्म की गति कितनी होगी? कैसे होगी? इस प्रश्न का उत्तर देना सहज सरल नहीं है।

विश्व-मानव इन्द्रिय चेतना के स्तर पर जी रहा है। उसका आकर्षण अर्थ, पदार्थ और यन्त्र के प्रति अधिक है।

इन्द्रियातीत चेतना के जागरण के बिना अध्यात्म के प्रति आकर्षण कैसे होगा?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org